यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् (यजुर्वेद)

ॐ

प्रभु समर्पण

संध्या-हवनमन्त्र-काव्यसुधा

आचार्य (डॉ.) नरेश कुमार

॥ओ३म्॥

प्रभु समर्पण

सन्ध्या हवन मन्त्र

काव्यसुधा

सम्पादक एवं काव्यकार

आचार्य (डॉ॰) नरेश कुमार

वेद-व्याकरण-साहित्याचार्य, एम. ए., पी-एच. डी.

प्रवक्ता एवं अध्यक्ष— संस्कृत विभाग, दोआबा कॉलेज़,

जालन्धर नगर

प्रकाशक

कमला आर्या खुशवख्तराय वैलफेयर एण्ड चैरिटेबल ट्रस्ट

195-A सिविल लाईन, जालन्धर – 144001

वितरक

श्री गुरु विरजानन्द स्मारक समिति ट्रस्ट

करतारपुर, जिला जालन्धर – 144801

तृतीय संस्करण–2000 प्रतियाँ

फरवरी, 1999

Scanned with CamScanner

कहाँ क्या है ?

1.	वैदिक सन्ध्या	1
2.	प्रार्थना मन्त्र	16
3.	स्वस्तिवाचन	21
4.	शान्तिकरण	33
5.	दैनिक अग्निहोत्र	43
6.	सामान्य प्रकरण (विशेष यज्ञ की आहुतियां)	56
7.	अधिक आहुतियों के लिए वेदमन्त्र-संकलन	64
8.	पौर्णमासी की आहुतियां	66
9.	अमावास्या की आहुतियां	67
10.	बलिवैश्वदेव यज्ञ	68
11.	यज्ञरूप प्रभो हमारे	69
12.	मंगल कामना— सर्वेभवन्तु सुखिनः	70
13.	धन्यवाद गीत— आज मिल सब गीत गाओ	70
14.	सुखी बसे संसार सब	71
15.	आरती— ओं जय जगदीश हरे	72
16.	पितृयज्ञ विधि-अतिथियज्ञ विधि	74
17.	गीत भजन संग्रह	75
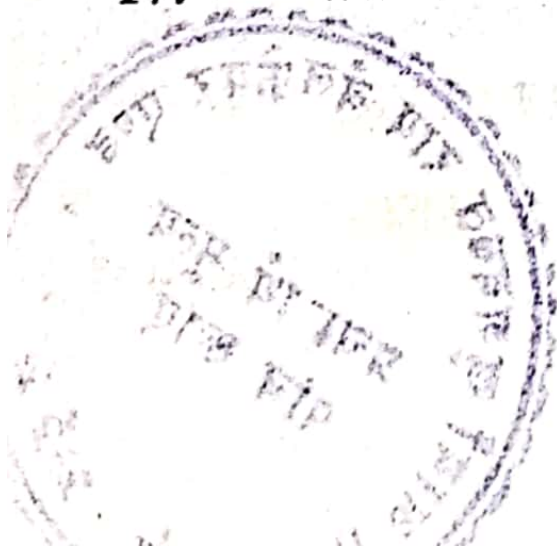
हृदय-मन्दिर की पुकार

जीवन की सन्ध्या है। कई मास से आँखों की ज्योति भी पर्याप्त मन्द थी। अब मोतियाबिन्द का आपरेशन हुआ है। परमात्मा का कोटि-कोटि धन्यवाद है कि कुछ ज्योति पुनः लौट आई है।

आर्य समाज रूपी माँ की सेवा में जीवन को सार्थक बनाने का प्रयास करते हुए जीवन के 78 वर्ष बीतने को जा रहे हैं। परन्तु आर्य समाज की वर्तमान दुर्दशा देखकर मन में अथाह पीड़ा होती है। स्वार्थ की राजनीति तथा पदलोलुपता में फँसे कुछ लोगों ने इसे अन्दर से खोखला कर दिया है। धन और पद के मद में अन्धे हुए ये लोग कर्त्तव्य से भटक गए हैं, विवेक समाप्त हो गया है, नासमझी में या जानबूझकर ऋषिवर दयानन्द की आत्मा आर्य समाज की हत्या में लगे हुए हैं। विद्वान्-साधु-सन्यासियों का अपमान होता है, चापलूसों की झोलियाँ भरी जाती हैं। ऐसी दशा के कारण अब तो ऐसा लगने लगा है कि आर्यसमाज में वेदप्रचार के नाम पर अपने नाम के ढोल पीटना- पिटवाना ही मुख्यकार्य बन गया है। शोक ! महाशोक !! इतिहास और भावी पीढ़ी क्षमा नहीं करेगी। डरो, डरो, डरो, वह प्रभु बड़ा जबरदस्त है।

शरीर अशक्त है, प्रभु ही शरण है, केवल पीड़ा ही व्यक्त कर सकती हूं। फिर भी आशा है, पाप का अन्धेरा दूर होगा, पुण्य का सूर्य उदय होगा।

1995 में अपने हीरक-जयन्ती-जन्मोत्सव पर "कमला आर्या खुशबख्त राय वैलफेयर एण्ड चैरीटेबल ट्रस्ट" की स्थापना की थी। इसी अवसर पर आचार्य नरेश कुमार जी द्वारा रचित 'सन्ध्या-हवनमन्त्र-काव्यसुधा' पुस्तक का प्रकाशन किया था। मेरी इच्छा थी कि इस बार किसी अन्य पुस्तक को प्रकाशित किया जाए। परन्तु आर्यसुधीजनों में यह पुस्तक इतनी प्रिय और उपयोगी हुई कि अत्यधिक माँग के कारण इसे ही पुनः प्रकाशित किया जा रहा है। कुछ भजन बदल दिए हैं, आर्य समाज के नियम भी दे दिए हैं। पूर्व की भाँति इसकी प्रकाशन व्यवस्था का सम्पूर्ण भार भी आचार्य जी ने संभालकर मुझे और भी उपकृत कर दिया है। मैं हृदय से इनकी आभारी हूँ।

— कमला आर्या

सम्पादकीय—

श्रीमती कमला आर्या— एक प्रखर व्यक्तित्व

महर्षि दयानन्द की अनन्य भक्त, प्रख्यात समाज-सेविका, स्वाध्याय-विदुषी श्रीमती कमला आर्या का नाम आर्यसमाज के क्षेत्र में सुपरिचित है। हिमाचल प्रदेश की 'कसौली' नगरी में आपका जन्म ५ मार्च १९२० ई० को हुआ। आपके पिता श्री नन्दलाल भटारा 'सैण्ट्रल रिसर्च इन्स्टीट्यूट कसौली' में सुयोग्य तथा सर्वप्रिय डाक्टर थे। आपकी माता श्रीमती देवकी देवी अत्यन्त धार्मिक वृत्ति की महिला थी।

१७ वर्ष की आयु में लुधियाना (पंजाब) के श्री खुशवख्तराय छिब्बा के साथ आपका विवाह हुआ। आपको अपने माता-पिता तथा ससुराल, दोनों ओर से ही पौराणिक वातावरण प्राप्त हुआ। परन्तु सौभाग्यवश आपकी जेठानी श्रीमती प्रकाशवती छिब्बा आर्यपरिवार से थी, जो कभी-कभी घर पर ही यज्ञ का आयोजन कर लिया करती थी। उन्हीं की संगति से आपकी रुचि यज्ञ में हो गई। सन्ध्या-हवन के सभी मन्त्र भी कण्ठस्थ कर लिए। धीरे-धीरे घर के निकट ही साबुन बाजार (लुधियाना) की आर्य समाज में जाना आरम्भ हो गया। ३५ वर्ष की आयु में आपने आर्य समाज की सदस्यता ग्रहण की। आर्य समाज के सत्संगों, उत्सवों तथा अन्य कार्यकलापों में बढ़-चढ़ कर भाग लेने लगी। इस प्रकार अनुकूल वातावरण में जन्म-जन्मान्तर के आर्य संस्कार अनजाने में ही पल्लवित हो गए।

दुर्भाग्यवश ११ जनवरी १९६१ ई० को आपके पूज्य पतिदेव का देहावसान हो गया। सन्तान भी कोई नहीं थी, अतः जीवन शून्य, अशान्त तथा भाररूप प्रतीत होने लगा। भारतीय-नारी के जीवन में पति का वियोग सबसे बड़ा आघात है। इस प्रहार को सहन करना सरल नहीं। परन्तु आर्य समाज रूपी माँ की गोद ने इन्हें धैर्य, वात्सल्य, सम्मान तथा सम्बल प्रदान किया। नये ढंग से जीवन-यापन करने की कला दी। सारा समय प्रभु-भक्ति, स्वाध्याय और समाज सेवा के अर्पित हो गया। अन्य महिला साथियों के साथ लुधियाना तथा आस-पास के क्षेत्र की आर्य समाजों के उत्सवों में जाने लगी। वहाँ उच्चकोटि के आर्य विद्वानों साधु-महात्माओं के उपदेश सुनती और जीवन को धन्य करती। बड़े-बड़े यज्ञों में बैठ कर विद्वानों से वेद मन्त्रों के उच्चारण

ध्यानावस्थित होकर सुनती और इसी गुण-ग्राहकता के कारण धीरे-धीरे स्वयं भी वेदपाठी हो गई ।

एक बार आर्य समाज अड्डा होशियारपुर, जालन्धर के उत्सव में एक विद्वान् के उपदेश में सुन लिया कि जो प्रतिदिन दोनों समय सन्ध्या नहीं करता वह शूद्रवत् है, और उसी दिन से दोनों समय की नियमित सन्ध्या आरम्भ हो गई । आनन्दमूर्ति श्री आनन्दभिक्षु जी महाराज तथा यज्ञ और गायत्री के परमोपासक महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज के उपदेशों से प्रेरणा पाकर प्रतिदिन यज्ञ भी आरम्भ कर दिया । इस प्रकार आंधी हो या बरसात, घर हों या यात्रा पर, स्वस्थ हों या अस्वस्थ दैनिक सन्ध्या-हवन का यह व्रत ३३ वर्षों से अखण्ड रूप से निरन्तर चल रहा है । इतना ही नहीं, अपने घर पर ही आपने यजुर्वेद तथा सामवेद के १०१-१०१ पारायण यज्ञ भी सम्पन्न किए ।

आप मधुर गायिका होने के साथ-साथ निर्भीक वक्त्री भी हैं । सम्मेलन आयोजन व मञ्च संचालन की आपमें अद्‌भुत क्षमता है । पंजाब तथा पंजाब से बाहर आर्य समाज के उत्सवों में महिला-सम्मेलन आयोजित करने, संचालित करने या अध्यक्ष के पद को सुशोभित करने का गौरव आपको अनेक बार प्राप्त हुआ है । आपके सत्प्रयासों से ही स्त्री-आर्य समाज के नाम से पंजाब-हरयाणा-हिमाचल प्रदेश में आर्य महिलाओं को संगठित होने का अवसर मिला और उन्हें 'प्रान्तीय आर्य महिला सभा' (पंजाब-हरयाणा-हिमाचल प्रदेश) के नाम से आपने वैचारिक-मञ्च भी प्रदान किया । स्त्रियों को पारिवारिक सत्संग की प्रेरणा दी, जिससे घर-घर में वेद प्रचार तथा यज्ञादि हो सके । १९८० ई० में आपने इंगलैण्ड, अमेरिका तथा कैनेडा के लगभग ३० परिवारों में यज्ञ का आयोजन किया । इस प्रकार महर्षि दयानन्द के सन्देश तथा वेदवाणी को आपने देश-देशान्तर में पहुंचाया ।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरूदत्त भवन, किशन पुरा चौक, जालन्धर के प्रधान श्री वीरेन्द्र जी ने १९८४ ई० में आपकी नेतृत्व-क्षमता का लाभ उठाने के लिए आपको सभा की महामन्त्री के रूप में प्रथम बार मनोनीत किया । आपने पूर्ण तन्मयता तथा निष्ठा से इस महान् उत्तरदायित्व का निर्वाह किया । फलस्वरूप १९८७ ई० में पुनः आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामन्त्री के पद पर आपको सुशोभित किया गया ।

स्त्री आर्य समाज स्वामी श्रद्धानन्द बाजार लुधियाना, आर्य गर्ल्ज हाई सैकण्डरी स्कूल लुधियाना तथा दयानन्द माडल स्कूल लुधियाना के प्रधान पद पर आपने अनेक वर्षों कार्य किया । श्री गुरु विरजानन्द स्मारक समिति ट्रस्ट करतारपुर की आप.अनेक वर्षों से उपमन्त्री/ उपप्रधान हैं । सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली, आर्य कालेज़ लुधियाना, दयानन्द मैडीकल कालेज लुधियाना, स्वामी स्वतन्त्रतानन्द स्मारक मोही आदि विभिन्न संस्थाओं में आपने सक्रिय सदस्य के रूप में कार्य किया । इस प्रकार अनेकानेक संस्थाओं ने आपकी सेवाएं ग्रहण कर स्वयं को गौरवान्वित किया है ।

३ दिसम्बर १९८९ को आर्य समाज बैक फील्डगंज, लुधियाना के विशाल प्रांगण में लुधियाना के विशिष्ट नागरिकों, शिक्षा संस्थानों तथा आर्य बन्धुओं की ओर से एक विराट् समारोह आपकी दीर्घकालिक समाज सेवा के सम्मान में आयोजित किया गया । जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तात्कालिक प्रधान श्री वीरेन्द्र जी एम० ए० की अध्यक्षता में आपको **'अभिनन्दन-पत्र'** अर्पित किया गया ।

आपकी कार्यक्षमता अद्‌भुत है । **श्री गुरु विरजानन्द स्मारक समिति ट्रस्ट करतारपुर** द्वारा संचालित **श्री गुरु विरजानन्द गुरूकुल** की आपने स्वयं तथा अन्यों द्वारा आर्थिक सहयोग प्रदान करवाकर भरपुर सेवा की है । स्मारक ट्रस्ट करतारपुर के वार्षिक उत्सव में प्रतिवर्ष महिला-सम्मेलन का सम्पूर्ण आयोजन आपके ही नेतृत्व में विगत अनेक वर्षों से हो रहा है । महामना पूजास्पद स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज द्वारा **दयानन्द मठ चम्बा** (हिमाचल प्रदेश) में एक वर्ष के दीर्घ-सत्रीय गायत्री-महायज्ञ (पूर्णाहुति १३ अप्रैल १९९५) में आर्थिक सहयोगियों के सम्पर्क सूत्र के रूप में आपकी विशेष भूमिका रही है ।

1995 में अपने हीरक-जयन्ती-जन्मोत्सव पर **"कमला आर्या खुशबख्त राय वैलफेयर एण्ड चैरीटेबल ट्रस्ट"** की स्थापना कर परोपकार का एक ओर मार्ग खोल दिया था । ट्रस्ट की कार्यशीलता तथा माता जी के दीर्घजीवन और सुन्दर स्वास्थ्य के लिए अनेकशः शुभकामनाएं । करुणामय प्रभु की कृपावृष्टि सब पर सदा सर्वत्र हो ।

— आचार्य (डॉ.) नरेश कुमार

55, न्यू कैलाश नगर, जालन्धर - 144004

॥ ओ३म् ॥

श्रीमती कमला आर्या

॥ ओ३म् ॥

श्री खुशवख्त राय

प्रातःकालीन– जागरण मन्त्र

प्रातः उठते ही निम्न मन्त्रों का अर्थपूर्वक पाठ करना चाहिए–

ओ३म् प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम॥ १ ॥

—ऋग्० ७.४१.१

अग्निरूप ऐश्वर्य-प्रदाता, सर्वमित्र वरणीय प्रभो !
सूर्य-चन्द्रसम पावक-प्राणद, जगपोषक भजनीय विभो !
तुम ब्रह्माण्ड-पटल के पालक, प्रेरक सोम, रुद्र तुम आप।
पुण्य प्रभात काल में भगवन् ! करते तव वन्दन हे नाथ॥ १ ॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्त्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह॥ २ ॥

—ऋग्० ७.४१.२

विजयशील ऐश्वर्य-विधायक, तेजस्वी हे ईश महान् !
अन्तरिक्ष-सूर्यादि लोक के, कर्त्ता धर्त्ता तुझे प्रणाम।
विश्वाधर सर्वज्ञ प्रकाशक, दुष्ट जनों के दण्ड-विधान।
करें आपका वन्दन प्रातः, हे भजनीय भव्य भगवान्॥ २ ॥

भग प्रणेतर्भग सत्य राधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥ ३ ॥

—ऋग्० ७.४१.३

हे भजनीय-स्वरूप, प्रणेता = सदाचार-प्रेरक सुखधाम।
प्रभो ! सत्यधन-मोक्षप्रदाता, रक्षा करो, बुद्धि दो दान।

गो-अश्वादिक पशुधन द्वारा, और सुजन का पाकर साथ।
सुनर-वीर-ऐश्वर्य-युक्त हों, कृपा आपकी से हे नाथ ॥ ३ ॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥ ४ ॥

—ऋग्० ७.४१.४

दिन के पूर्व व मध्य भाग में, सूर्योदय में सदा सहर्ष।
हे असंख्य-धनदाता प्रभु इस, प्रात समय पाएं उत्कर्ष।
श्रेष्ठ-जनों की श्रेष्ठ बुद्धि में- रहें, चलें, पाएं उत्थान।
कृपा आपकी से जीवन हों, दृढ़-उद्यम-ऐश्वर्य-प्रधान ॥ ४ ॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम। तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह ॥ ५ ॥

—ऋग्० ७.४१.५

सकलैश्वर्य-प्रदाता भगवन्! सब विधि तुम करते कल्याण।
कृपा करो, हम दिव्यगुणी हों, हों ऐश्वर्यशील-भगवान्।
तुम भजनीय, तुम्हें भजते सब, भजें तुम्हें, माँगे वरदान।
पथ-दर्शक तुम बनो हमारे, उपकारक-जीवन दो दान ॥ ५ ॥

रात्रीकालीन— शिव-संकल्प मन्त्र

रात्री में सोने से पूर्व 'शिव-संकल्प' मन्त्रों का अर्थ-पूर्वक पाठ करना चाहिए। 'शिव संकल्प-मन्त्र' इसी पुस्तक के पृष्ठ ४०-४१ पर (शान्तिकरण मन्त्र २० से २५ तक) अर्थ सहित छपे हैं। कृपया वहीं देखें।

॥ ओ३म् ॥

वैदिक-सन्ध्या

(अथ ब्रह्म-यज्ञः)

दोहा— प्रात सांय नित प्रेम से, निर्मल-चित्त-शरीर।
प्रभु ! सन्ध्या वन्दन करैं, हरहु पाप भय भीर॥
शुभ कर्मन में मन रमै, कबहुँ न पापाचार।
बल विद्या बुधि दीजिए, पुरुषारथ फल चार॥

(शिखा-बन्धन करते समय गायत्री-मन्त्र का उच्चारण करें)

गायत्री-मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ १ ॥

—यजुः० ३६। ३॥

चौपाई—

ओंकार प्रभु नाम तुम्हारा। भवसागर से तारणहारा॥
प्राणरूप नित संकट-त्राता। सुखस्वरूप तू जगत्-विधाता॥
वरणयोग्य जो तेज तुम्हारा। सब कलिमल का हरने हारा॥
शुद्ध स्वरूप तुझे हम ध्यावें। श्रेष्ठ बुद्धि, बल, विद्या पावें॥ १॥

आचमन-मन्त्र

निम्न मन्त्र से सर्वव्यापक प्रभु से सुख की कामना करते हुए दाएं हाथ में जल लेकर तीन आचमन करें—

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः॥ २॥

—यजुः० ३६।१२॥

चौपाई—

सर्वप्रकाशक आनंदराशी। सब जग व्यापे तू अविनाशी॥
पूर्णानन्द इष्ट फल दीजै। सुख-कल्याण-वृष्टि नित कीजै॥ २॥

अङ्ग-स्पर्श-मन्त्र

निम्न मन्त्रों से बाईं हथेली में जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा एवं अनामिका अंगुलियों से जल के द्वारा इन्द्रियों का स्पर्श करते हुए इन्द्रियों की स्वस्थता एवं दृढ़ता के लिये ईश्वर से प्रार्थना करें। (पहले दाहिने अङ्ग का पश्चात् बाएं अङ्ग का स्पर्श करें) —

ओ३म् वाक् वाक्। (इससे मुख का स्पर्श)
ओ३म् प्राणः प्राणः। (इससे नासिका का स्पर्श)
ओ३म् चक्षुः चक्षुः। (इससे आँखो का स्पर्श)
ओ३म् श्रोत्रम् श्रोत्रम्। (इससे कानों का स्पर्श)
ओ३म् नाभिः। (इससे नाभि का स्पर्श)
ओ३म् हृदयम्। (इससे हृदय का स्पर्श)
ओ३म् कण्ठः। (इससे कण्ठ का स्पर्श)
ओ३म् शिरः। (इससे शिर का स्पर्श)
ओ३म् बाहुभ्याम् यशोबलम्। (इससे दोनों कन्धों पर)
ओ३म् करतलकरपृष्ठे॥ ३॥
(इससे हथेली के दोनों ओर स्पर्श करें)

चौपाई—

यह शरीर प्रभु मन्दिर तेरा। यश, बल का नित रहे बसेरा॥
वाणी शुभ, प्रिय, सत्य उचारे। प्राण सबल हों सदा हमारे॥
आँखे दिव्य ज्योति-युत होवें। कान ज्ञान से भूषित होवें॥
जनन शक्ति को नाभी पावे। उर उदारता से भर जावे॥
कण्ठ सदा तेरा यश गावे। शिर अनन्त गौरव को पावे॥
भुजा यशोबल को नित धारे। हाथ करें शुभ कर्म हमारे॥
करहु कृपा प्रभु परम सुखारी। स्वस्थ,सबल हों इन्द्रिय सारी॥
पाप-कर्म के निकट न जावें। ज्ञान कर्म से यश बल पावें॥३॥

मार्जन-मन्त्र

बाएँ हाथ की हथेली पर जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए जल के छींटे देते हुए, ईश्वर से इन अङ्गों की पवित्रता के लिये प्रार्थना करें—

ओ३म् भूः पुनातु शिरसि। (इस से सिर पर)
ओ३म् भुवः पुनातु नेत्रयोः। (इससे दोनों नेत्रों पर)
ओ३म् स्वः पुनातु कण्ठे। (इससे कण्ठ पर)
ओ३म् महः पुनातु हृदये। (इससे हृदय पर)
ओ३म् जनः पुनातु नाभ्याम्। (इससे नाभि पर)
ओ३म् तपः पुनातु पादयोः। (इससे दोनों पैरों पर)
ओ३म् सत्यं पुनातु पुनःशिरसि। (इससे फिर सिर पर)
ओ३म् खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र॥ ४॥
(इससे सारे शरीर पर)

चौपाई—

सिर पवित्र कर प्राण-अधारा। आँख निरोगी दुःख-निवारा॥
सुखस्वरूप कण्ठे सुस्वर दे। महातेज उर पावन कर दे॥
सविता शुद्ध नाभि कर दीजै। महातपी तप चरणन दीजै॥
सत्यरूप शिर पावन कीजै। ब्रह्म शुद्धि सब अङ्गन दीजै॥ ४॥

प्राणायाम-मन्त्र

ओ३म् भूः। ओ३म् भुवः। ओ३म् स्वः। ओ३म् महः।
ओ३म् जनः। ओ३म् तपः। ओ३म् सत्यम्॥ ५॥

—तैत्ति० प्रपा० १० । अनु० २७॥

इस मन्त्र के अर्थ की मन में भावना करते हुए कम से कम तीन प्राणायाम करें, जिसकी सामान्य विधि इस प्रकार है—

भीतर की वायु को बल से नासिका के द्वारा बाहर फैंक कर यथा-शक्ति बाहर ही रोकें। पुनः धीरे-धीरे श्वास को भीतर लेकर यथा-शक्ति अन्दर रोकें। पुनः बल से बाहर फैंक कर बाहर ही श्वास को रोकें। यह एक प्राणायाम है।

चौपाई—

'ओम्' ईश रक्षक सुखदाता। जगकर्त्ता-धर्त्ता-संघाता॥
प्राणतुल्य **'भूः'** प्राणविधाता। हरता दुःख **'भुवः'** दुःखत्राता॥
भक्तों को **'स्वः'** नित सुख देता। **'महः'** महा महिमा भर देता॥
पिता **'जनः'** जग का उत्पादक। **'तपः'** दुष्ट का दण्ड-विधायक॥
जो जन तव आज्ञा को ध्यावें। शुभकर्मी वे दण्ड न पावें॥
'सत्य'-रूप व्यापक अविनाशी। करो दूर सब कल्मष-राशि॥ ५॥

अघमर्षण-मन्त्र

निम्न मन्त्रों के द्वारा प्रभु की व्यापकता शक्तिमत्ता और सृष्टि-रचना का चिन्तन करते हुए, रात्रि में किए दुष्कर्मों का प्रातःकाल, एवं दिन में किए गए पापों का सायंकाल पश्चात्ताप करना चाहिए, ताकि भविष्य में उन को न दोहराया जाए—

ओ३म् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत। ततः समुद्रो अर्णवः ॥ ६ ॥

—ऋग्०१०।१९०।१॥

चौपाई—

सर्वज्ञानमय शक्तिस्वरूपा। तू अनन्त-बल देव अनूपा॥
मूल प्रकृति में गति उपजावे। कार्यरूप फिर जगत् बनावे॥
सब हित वेदज्ञान प्रगटावे। महाप्रलय की रात्री लावे॥
जल पूरण आकाश रचावे। नाथ तुम्हीं को सब जग ध्यावे॥ ६ ॥

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद् विश्वस्य मिषतो वशी ॥ ७ ॥

—ऋग्० १०।१९०।२॥

चौपाई—

सब जग वश तेरे विश्वाधर। जल-पूरण आकाश बनाकर॥
संवत् काल विभाग रचाए। तूने फिर दिन-रात बनाए॥ ७ ॥

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ ८ ॥ ऋग्०१०।१९०।३॥

चौपाई—

सूर्य, चन्द्र, द्यौ, पृथिवि पसारे। अन्तरिक्ष, लोकान्तर सारे॥
पूर्व कल्प जैसे ही स्वामी। रचे पदारथ अन्तर्यामी॥

धाता पिता तुम्हें हम ध्यावें। सकल पाप हमरे मिट जावें॥
मन ऐसा निर्मल कर दीजै। पापकर्म में कभी न रीझै॥८॥

आचमन-मन्त्र

इन मन्त्रों को पढ़कर पुनः निम्न मन्त्र से तीन आचमन करें—

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः॥१॥ —यजुः० ३६।१२॥

चौपाई—

देवी दिव्यरूप कल्याणी। तुमि अभीष्ट फल देहि भवानी॥
तुमि व्यापक आकाश-समाना। बरसाओ आनंद सुख नाना॥९॥

तदनन्तर सन्ध्या के आरम्भ में शिखा को बाँधते हुए जो गायत्री मन्त्र बोला था, वहाँ से लेकर अब तक बोले गये मन्त्रों के अर्थों का, इस समय अच्छी प्रकार मन से विचार करें, ईश्वर का ध्यान तथा ईश्वर की उपासना करें।

दोहा- मङ्गलमय सत् चित् विभू, नित्यानन्दस्वरूप।
न्यायाधीश महेश तू, सखा मात पितु भूप॥
नहीं तुम्हारा आदि है, नहीं अन्त नहि रूप।
अज निर्मल निर्भय अमर, तू प्रभु सदा अनूप॥

मनसा-परिक्रमा-मन्त्र

नीचे लिखे मंत्रों से सर्वव्यापक परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना करें। इन छः मन्त्रों से परम प्रभु **'ओम्'** की सत्ता को सब दिग्-दिगन्तरों में अनुभव करते हुए, सम्पूर्ण विश्व के प्रति द्वेष-भावना को नष्ट करके मैत्रीभाव स्थापित कर निर्भय, निःशङ्क, उत्साही, आनन्दित और पुरुषार्थी रहें—

ओ३म् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ १० ॥

—अथर्व० ३।२७।१॥

चौपाई—

पूर्व दिशा का देव निराला। अग्निरूप तू जग रखवाला॥
सूरज की किरणों के द्वारा। जीवन धारे यह जग सारा॥
बन्धन-हीन, ज्ञान-विज्ञानी। तुम सम और दयालु न दानी॥
पुनि पुनि प्रभु तुम्हरा गुण गावें। तव आज्ञा में शीश नमावें॥
जिससे द्वेष हमारा होवे। या जो चैन हमारा खोवे॥
न्यायकारि सब शरण तुम्हारे। वैरभाव मिट जावें सारे॥ १०

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ११ ॥

—अथर्व० ३।२७।२॥

चौपाई—

दक्षिण दिशि में भी रखवारे। इन्द्ररूप महाराज हमारे॥
कुटिल कीट जो जीव भयंकर। उनसे रक्षा करो निरन्तर॥
ज्ञानी वेद-ज्ञान सिखलावें। पाप-भाव से हमें बचावें॥
पुनि पुनि प्रभु तुम्हरा गुण गावें। तव आज्ञा में शीश नमावें॥
जिससे द्वेष हमारा होवे। या जो चैन हमारा खोवे॥
न्यायकारि सब शरण तुम्हारे। वैरभाव मिट जावें सारे॥ ११

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ १२ ॥

—अथर्व० ३।२७।३॥

चौपाई—

वरुणरूप पश्चिम दिशि धाता। सर्पादिक से हमें बचाता॥
जो तुम्हरी रक्षा में आवें। नहीं किसी से वे भय खावें॥
अन्न आदि उपजाकर सारे। प्राण पोषते आप हमारे॥
पुनि पुनि प्रभु तुम्हरा गुण गावें। तव आज्ञा में शीश नमावें॥
जिससे द्वेष हमारा होवे। या जो चैन हमारा खोवे॥
न्यायकारि सब शरण तुम्हारे। वैरभाव मिट जावें सारे॥ १२ ॥

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ १३ ॥

—अथर्व० ३।२७।४॥

चौपाई—

सोमरूप उत्तर दिशि स्वामी। भव-भय-भञ्जक शान्त सुनामी॥
उपजे स्वयं कीट जो त्राता। उनसे भी तू आप बचाता॥
बिजली से भू-लोक प्रकाशा। ऊर्जा भर हर देह विकासा॥
पुनि पुनि प्रभु तुम्हरा गुण गावें। तव आज्ञा में शीश नमावें॥

जिससे द्वेष हमारा होवे। या जो चैन हमारा खोवे॥
न्यायकारि सब शरण तुम्हारे। वैरभाव मिट जावें सारे॥ १३॥

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ १४॥ —अथर्व० ३।२७।५॥

चौपाई—

विष्णुरूप व्यापक परमेशा। निम्न दिशा-भूलोक महेशा॥
तुम रक्षक कर्त्तव्य-प्रकाशक। मोह और अज्ञान विनाशक॥
वृक्ष लतादिक रचे तुम्हारे। जिससे सब जग जीवन धारे॥
पुनि पुनि प्रभु तुम्हरा गुण गावें। तव आज्ञा में शीश नमावें॥
जिससे द्वेष हमारा होवे। या जो चैन हमारा खोवे॥
न्यायकारि सब शरण तुम्हारे। वैरभाव मिट जावें सारे॥ १४॥

ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ १५॥ —अथर्व० ३।२७।६॥

चौपाई—

ऊर्ध्व दिशा के स्वामी भगवन्। सबसे बड़े आप जग-जीवन॥
भक्तों पर तुम दया दिखाते। रोग-शोक से हमें बचाते॥
दाता आप मेघ बरसावें। उपजें अन्न जीव सुख पावें॥
पुनि पुनि प्रभु तुम्हरा गुण गावें। तव आज्ञा में शीश नमावें।

जिससे द्वेष हमारा होवे । या जो चैन हमारा खोवे ॥
न्यायकारि सब शरण तुम्हारे । वैरभाव मिट जावें सारे ॥ १५ ॥

उपस्थान-मन्त्र

तत्पश्चात् परमात्मा का उपस्थान अर्थात् परमेश्वर के निकट मैं, और मेरे निकट परमात्मा है, ऐसी बुद्धि करके निम्न मन्त्रों से परमेश्वर की स्तुति व प्रार्थना करे—

ओ३म् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ १६ ॥

—यजुः० ३५ । १४ ॥

चौपाई—

सूर्य-रूप प्रभु ज्ञान-प्रकाशक । अविनाशी अंधकार विनाशक ॥
विद्यमान तू प्रलय-अनन्तर । तुहि व्यापे जग सकल चराचर ॥
नित्य प्रकाश-स्वरूप विधाता । तुमि सर्वत्र लखें सुखदाता ॥
दिव्य देव तुझको हम ध्यावें । तुम्हरी परम ज्योति को पावें ॥ १६ ॥

उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ १७ ॥

—यजु० ३३ ।३१ ॥

चौपाई—

ज्ञानरूप परमेश्वर प्यारा । वेद ज्ञान का देने हारा ॥
निराकार की अद्भुत माया । कण कण में,पर नजर न आया ॥
झण्डा जैसे मार्ग दिखाता । वैसे सकल पदारथ दाता ॥
क्या सूरज क्या चांद सितारे । तुम्हरा पता बताने हारे ॥ १७ ॥

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्यऽ आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा ॥ १८ ॥ यजु० ७।४२॥

चौपाई—

प्रभुवर तव आज्ञा जो सेवें। आप उन्हें अद्भुत बल देवें॥
पंवन,अग्नि,जल,भूमि,अकाशा । नाथ तुम्ही सब जगत्-प्रकाशा॥
सकल चराचर के तुम स्वामी । घट-घट वासी अन्तर्यामी ॥
तुम्हरी शरण पिता हम आयो। अन्तर ज्ञान-ज्योति प्रगटायो॥ १८

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतम् अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ १९ ॥ —यजुः० ३६।२४॥

चौपाई—

अनुपम देव सृष्टि के स्त्रष्टा । सकल विश्व के तुम हो द्रष्टा॥
तुम हो नाथ परम शुभकारी । शुद्ध पुनीत भक्त हितकारी ॥
सृष्टि पूर्व भी सत्ता तेरी । सबसे महान् महत्ता तेरी ॥
जिस पर कृपा आपकी होई। देखे वर्ष शतम् तुमि सोई॥
होय शतायु देव तुमि ध्यावें । आखें पूर्ण ज्योति को पावें ॥
कृपासिन्धु हम शरण तिहारे । कान वर्ष सौ सुनें हमारे ॥
तुम्हरी महिमा का रस घोले । वाणी पूर्ण आयु तक बोले॥
जीवन भर सब अङ्ग हमारे । कर्मशील हों स्वस्थ सुखारे ॥
दो वरदान दया के दानी । हों अदीन हम गौरवमानी ॥
वर्ष शताधिक जीवन पावें। देखें, जीवें, सुनें-सुनावें॥ १९ ॥

गायत्री-मन्त्र

तदनन्तर नीचे लिखे गायत्री (सावित्री वा गुरु-मन्त्र) का यथावकाश अर्थ-विचारपूर्वक मन से अधिकाधिक जप करें । गायत्री-मन्त्र का उच्चारण, उसका अर्थज्ञान और तदनुसार आचरण करें—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ २० ॥

—यजुः० ३६ ।३ ॥

चौपाई—

ओम् नाम अति मङ्गलकारी । काटे बन्ध, परम सुखकारी ॥
प्राणरूप सुखदा दुःख-नाशक । सविता पिता जगत् उत्पादक ॥
तुम्हरा तेज अविद्या-नाशी । तुम ते सकल लोक अविनाशी ॥
शुद्ध स्वरूप शरण हम तेरो । श्रेष्ठ मार्ग मति हमरी प्रेरो ॥ २० ॥

समर्पणम्

इस प्रकार से सब मन्त्रों के अर्थों के चिन्तन से परमेश्वर की सम्यक् उपासना करके समर्पण करें—

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि-कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः ॥ २१ ॥

चौपाई—

परम दयालु कृपालु विशाला । तुम बिन और कौन जगपाला ॥
जप उपासना कर्म हमारे । प्रभु तुमको अर्पित हों सारे ॥
हम पर नाथ कृपा कर दीजै । हमको शीघ्र यही वर दीजै ॥
धर्म अर्थ अरु काम पदारथ । होवहिं सिद्ध मोक्ष पुरुषारथ ॥ २१ ॥

नमस्कार-मन्त्र

अन्त में निम्नलिखित मन्त्र द्वारा परम पिता परमात्मा को विनीतभाव से नमस्कार करें—

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च, नमः शङ्कराय च मयस्कराय च, नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ २२ ॥

—यजुः०१६।४१॥

चौपाई—

मङ्गलमूल अमङ्गलहारी । नमस्कार प्रभु भवभय हारी ॥
परमानन्द मोक्षसुखदाता । भक्त जनन के सङ्कट त्राता ॥
तुमि शङ्कर कल्याण स्वरूपा । हरहिं ताप सुख देहि अनूपा ॥
नमस्कार तुमि बारम्बारा । करहिं नाथ कल्याण हमारा ॥ २२ ॥

दोहा— अटल नियम प्रभु आपका, शरणागत-कल्याण ।
शरण आपनी राखि के, करहिं भक्त-जन-त्राण ॥

॥ इति वैदिक-सन्ध्या ब्रह्म-यज्ञश्च समाप्तः ॥

गायत्री-गीत

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू ।
तुझ से ही पाते प्राण हम, दुःखियों के कष्ट हरता है तू ॥
तेरा महान् तेज है, छाया हुआ सभी स्थान ।
सृष्टि की वस्तु-वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान ॥
तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया ।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला ॥

* * * * * *

॥ ओ३म् ॥

अग्निहोत्र (हवन)

आचमन-मन्त्र

शान्तचित्त होकर शुद्ध आसन पर बैठें और दाईं हथेली में निर्मल जल लेकर इन तीन मन्त्रों से तीन आचमन करें—

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥

(इससे दाईं हथेली पर जल लेकर पहला आचमन करें)

ओ३म् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥

(इससे दूसरा आचमन करें)

ओ३म् सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥ ३ ॥

(इससे तीसरा आचमन करें)

—तैत्तिरीय आर०प्र०१० । अनु ० ३२,३४ ॥

भावार्थ—

विश्वाधार अमर जग-स्वामी, निराधार-आधार प्रभो !
मोक्ष-प्रदायक भद्र-विधायक, तुम मेरे आधार प्रभो ॥१ ॥

अमृतरूप जगपोषक प्रभुवर, सकल जगत् के आँचल आप ।
माँ अपने आँचल का सुख दो, कर दो दूर सकल सन्ताप ॥२ ॥

सत्यस्वरूप अजर जगदीश्वर, सत्यनिष्ठ मुझको कीजै ।
विमल-कीर्ति, धन-ऐश्वर्य-श्री, देव ! सदा मुझ में दीजै ॥३ ॥

अङ्ग-स्पर्श-मन्त्र

बाएँ हाथ की हथेली पर जल लेकर दाएँ हाथ की मध्यमा और अनामिका इन दोनों अंगुलियों से प्रथम दाईं ओर, बाद में बाईं ओर नीचे दिये छः मन्त्रों से अङ्ग-स्पर्श तथा सातवें मन्त्र से मार्जन करें—

ओ३म् वाङ्म आस्येऽस्तु ॥ १ ॥

(इस मन्त्र से मुख पर जल लगावें)

ओ३म् नसोर्मे प्राणोऽस्तु ॥ २ ॥

(इस मन्त्र से नासिका के दोनों छिद्रों पर जल लगावें)

ओ३म् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ ३ ॥

(इस मन्त्र से दोनों नेत्रों पर जल लगावें)

ओ३म् कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥ ४ ॥

(इस मन्त्र से दोनों कानों पर जल लगावें)

ओ३म् बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥ ५ ॥

(इस मन्त्र से दोनों बाहुओं पर जल लगावें)

ओ३म् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु ॥ ६ ॥

(इस मन्त्र से दोनों जंघाओं पर जल लगावें)

ओ३म् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ॥ ७ ॥ (इस मन्त्र से पूरे शरीर पर जल के छींटे देवें)

—पारस्कर गृह्य० का० १ । कण्डिका ३ । सूत्र २५

भावार्थ—

मुख में तेजस्वी वाणी प्रभु, नाक प्राण-बल वाले हों ।
दोनों नयन दृष्टि से पावन, सुनना कान संभाले हों ।
दोनों भुजा ओज-बल-शाली, जंघा पुष्ट तपस्वी हों ।
सदा देह के सभी अङ्ग प्रभु, स्वस्थ निरोग यशस्वी हों ॥

अथ ईश्वर-स्तुति-प्रार्थना-उपासना-मन्त्राः

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव । यद्भद्रं तन्नऽआ सुव ॥ १ ॥— यजुः० ३० । ३ ॥

अर्थ— हे **(सवितः)** सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता,समग्र ऐश्वर्ययुक्त **(देव)** शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके **(नः)** हमारे **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(दुरितानि)** दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को **(परासुव)** दूर कर दीजिए । **(यत्)** जो **(भद्रम्)** कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, **(तत्)** वह सब हमको **(आ सुव)** प्राप्त कीजिए ॥ १ ॥

सविता देव जगत्-उत्पादक, शुद्ध-स्वरूप विधाता हे !
हे अनन्त ऐश्वर्य-युक्त प्रभु, सर्व सुखों के दाता हे !
सब दुर्गुण-दुर्व्यसन-दुखों को, हम से दूर हटा दीजै ।
शुभकारक गुण-कर्म-पदारथ, भद्र-स्वभाव हमें दीजै ॥ १ ॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥ —यजुः० १३ ।४

अर्थ— जो **(हिरण्यगर्भः)** स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करनेहारे सूर्य-चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो **(भूतस्य)** उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का **(जातः)** प्रसिद्ध **(पतिः)** स्वामी **(एकः)** एक ही चेतनस्वरूप **(आसीत्)** था, जो **(अग्रे)** सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व **(समवर्त्तत)** वर्त्तमान था, **(सः)** सो **(इमाम्)** इस **(पृथिवीम्)** भूमि **(उत)** और **(द्याम्)** सूर्यादि को **(दाधार)** धारण कर रहा है, हम लोग उस **(कस्मै)** सुखस्वरूप **(देवाय)** शुद्ध परमात्मा के लिये **(हविषा)** ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से **(विधेम)** विशेष भक्ति किया करें ॥ २ ॥

सूर्यादिक स्वर्णिम पदार्थ के, उत्पादक धारक हो आप।
तुम उत्पन्न जगत् के स्वामी, एक मात्र चेतन निष्पाप।
जग से पहले वर्त्तमान हे, पृथिवी द्यू के धारणहार।
सुख-स्वरूप परमेश समर्पित, योग-भक्तिमय प्रेमोपहार ॥ २ ॥

यऽ आत्मदा बलदा यस्य विश्वऽउपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ३ ॥

—यजुः० २५। १३ ॥

अर्थ—(यः) जो **(आत्मदा)** आत्मज्ञान का दाता, **(बलदा)** शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेहारा, **(यस्य)** जिसकी **(विश्वे)** सब **(देवाः)** विद्वान् लोग **(उपासते)** उपासना करते हैं और **(यस्य)** जिसका **(प्रशिषम्)** प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन, न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, **(यस्य)** जिसका **(छाया)** आश्रय ही **(अमृतम्)** मोक्षसुखदायक है, **(यस्य)** जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही **(मृत्युः)** मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस **(कस्मै)** सुखस्वरूप **(देवाय)** सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिये **(हविषा)** आत्मा और अन्तः करण से **(विधेम)** भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें ॥ ३ ॥

आत्मज्ञान-आत्मिक-शारीरिक-सामाजिक-बल के दाता।
सब विद्वान् उपासक तेरे, तेरा ही शासन भाता।
तेरी शरण मोक्ष-सुखदायक, मरण तुझे बिसराने में।
न्यायाधीश सदा तत्पर हों, तव आदेश निभाने में ॥ ३ ॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽ इद्राजा जगतो बभूव। यऽ ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥ यजुः० २५। ११ ॥

अर्थ— (**यः**) जो (**प्राणतः**) प्राणवाले और (**निमिषतः**) अप्राणिरूप (**जगतः**) जगत् का (**महित्वा**) अपने अनन्त महिमा से (**एक इत्**) एक ही (**राजा**) विराजमान राजा (**बभूव**) है, (**यः**) जो (**अस्य**) इस (**द्विपदः**) मनुष्यादि और (**चतुष्पदः**) गौ आदि प्राणियों के शरीर की (**ईशे**) रचना करता है, हम लोग उस (**कस्मै**) सुखस्वरूप (**देवाय**) सकल ऐश्वर्य के देने हारे परमात्मा के लिये (**हविषा**) अपनी सकल उत्तम सामग्री से (**विधेम**) विशेष भक्ति करें ॥ ४ ॥

प्राणवान् अप्राणिरूप जग, जो प्रभु आप बनाता है।
निज अनन्त-महिमा से वह ही, राजा बना चलाता है।
दो या चार पैर वाले सब, जीवों के तुम सिरजनहार।
श्रद्धापूर्ण हमारी हवि को, दाता देव करो स्वीकार ॥ ४ ॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः। योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ५ ॥ —यजुः० ३२।६॥

अर्थ— (**येन**) जिस परमात्मा ने (**उग्रा**) तीक्ष्ण स्वभाववाले (**द्यौः**) सूर्य आदि (**च**) और (**पृथिवी**) भूमि को (**दृढा**) धारण किया (**येन**) जिस जगदीश्वर ने (**स्वः**) सुख को (**स्तभितम्**) धारण किया और (**येन**) जिस ईश्वर ने (**नाकः**) दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है, (**यः**) जो (**अन्तरिक्षे**) आकाश में (**रजसः**) सब लोक-लोकान्तरों को (**विमानः**) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस (**कस्मै**) सुखदायक (**देवाय**) कामना करने योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये (**हविषा**) सब सामर्थ्य से (**विधेम**) विशेष भक्ति करें ॥ ५ ॥

**तू प्रभु उग्र द्युलोक पृथिवि को, रचकर स्वयं टिकाता है।
तू आनन्द-लोक का धारक, मोक्षमार्ग दर्शाता है।
अन्तरिक्ष में सब लोकों का, निर्माता गतिदाता है।
भक्तिभाव भर ब्रह्म-प्राप्ति हित, भक्त शरण तव आता है ॥ ५ ॥**

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽ अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ६ ॥

—ऋग्० १०।१२१।१०॥

अर्थ— हे (प्रजापते) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा ! (त्वत्) आपसे (अन्यः) भिन्न दूसरा कोई (ता) उन (एतानि) इन (विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुए जड़-चेतनादिकों को (न) नहीं (परि बभूव) तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। (यत्कामाः) जिस-जिस पदार्थ की कामनावाले होके हम लोग भक्ति करें, (ते) आपका (जुहुमः) आश्रय लेवें और वाञ्छा करें (तत्) उस-उस की कामना (नः) हमारी (अस्तु) सिद्ध होवे, जिससे (वयम्) हम लोग (रयीणाम्) धनैश्वर्यों के (पतयः) स्वामी (स्याम) होवें ॥ ६ ॥

तुम से बढ़कर नहीं दूसरा, प्रजानाथ परमेश्वर आप ।
सब उत्पन्न चराचर जग के, सर्वोपरि सर्वेश्वर आप ।
जिस जिस शुद्ध कामना से हम, भक्ति करें, पूरी कर दो ।
प्रभो ! भक्त की झोली अपने, धन-ऐश्वर्यों से भर दो ॥ ६ ॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवाऽअमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥ ७ ॥

—यजु० ३२।१०॥

अर्थ— हे मनुष्यो ! (सः) वह परमात्मा (नः) अपने लोगों का (बन्धुः) भ्राता के समान सुखदायक, (जनिता) सकल जगत् का उत्पादक (सः) वह (विधाता) सब कामों का पूर्ण करने हारा, (विश्वा) सम्पूर्ण (भुवनानि) लोकमात्र और (धामानि) नाम-स्थान-जन्मों को (वेद) जानता है, और (यत्र) जिस (तृतीये) सांसारिक सुख-दुःख से रहित नित्यानन्द-युक्त (धामन्) मोक्षस्वरूप, धारण करने हारे परमात्मा में (अमृतम्) मोक्ष को (आनशानाः) प्राप्त होके (देवाः) विद्वान् लोग (अध्यैरयन्त) स्वेच्छा-पूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु,

आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें ॥ ७ ॥

न्यायाधीश जगत-स्रष्टा गुरु, राजा बन्धु विधाता हो।
सब के नाम-स्थान-जन्मों के, सब लोकों के ज्ञाता हो।
नित्यानन्द-मोक्षमय प्रभु में, नित विचरण विद्वान् करें।
भगवन् ! भक्त भक्ति से तेरी, नित्य भक्ति-रस पान करें ॥ ७ ॥

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम ॥ ८ ॥—यजुः० ४० । १६ ॥

अर्थ— हे (अग्ने) स्वयंप्रकाश ज्ञानस्वरूप,सब जगत् के प्रकाश करने हारे (देव) सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जिससे (विद्वान्) सम्पूर्ण विद्या-युक्त हैं, कृपा करके (अस्मान्) हम लोगों को (राये) विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये (सुपथा) अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से (विश्वानि) सम्पूर्ण (वयुनानि) अच्छे प्रज्ञान और उत्तम कर्म (नय) प्राप्त कराइये और (अस्मत्) हमसे (जुहुराणम्) कुटिलतायुक्त (एनः) पापरूप कर्म को (युयोधि) दूर कीजिये । इस कारण हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार की स्तुतिरूप (नम उक्तिम्) नम्रतापूर्वक प्रशंसा (विधेम) सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥ ८ ॥

स्वयं-प्रकाशरूप जगदीश्वर, देव सुपथ से ले जावें।
धन-राज्यादि-सुखों के हित हम, ज्ञान-कर्म उत्तम पावें।
पाप-रूप जो कुटिल कर्म हैं, उनसे दूर हमें कीजै।
करें स्तवन तव नम्र भाव से, अपनी शरण लगा लीजै ॥ ८ ॥

॥ इति ईश्वर-स्तुति-प्रार्थना-उपासनामन्त्राः ॥

'स्वस्तिवाचन' तथा 'शान्तिकरण' के मन्त्रों का पाठ विशेष अवसरों पर अथवा साप्तहिक सत्संगों के बृहद् यज्ञ में करना चाहिए। समय कम हो तो 'स्वस्तिवाचन' या 'शान्तिकरण' किसी एक का पाठ भी किया जा सकता है। दैनिक यज्ञ में इनके पाठ की आवश्यकता नहीं है।

अथ स्वस्तिवाचनम्

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्॥ १॥

—ऋग्० १।१।१॥

भावार्थ—

ज्ञानरूप ज्योतिर्मय ईश्वर ! सर्वप्रथम जगधारक आप।
सृष्टियज्ञ के तुम्हीं प्रकाशक, सर्वप्रथम हितकारक आप।
हर ऋतु में तुम पूजनीय हो, कर्मफलों के हो दाता।
तेरी ही करता हूँ स्तुति मैं, तुम रमणीय रत्नधाता॥ १॥

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये॥ २॥

—ऋग्० १।१।९॥

भावार्थ—

यथा पुत्र के लिये पिता है, सदा सुलभ शिक्षक सुख-खान।
वैसे प्राप्त आप हों हमको, दो सुख अतुल ज्ञान-विज्ञान।
ज्ञानरूप प्रभु पिता तुल्य तुम, हम हैं तेरे पुत्र समान।
नाथ ! पतन से हमें बचाओ, विनती सुनो, करो कल्याण॥ २

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥ ३ ॥

—ऋग्० ५।५१।११॥

भावार्थ—

सूर्य-चन्द्र जीवन दाता हों, शिक्षक-उपदेशक दें ज्ञान।
अचल अखण्ड प्रकाशक विद्युत्, करे वायु भी नित कल्याण।
प्रभो प्राणप्रद मेघ हमारे, खेतों में जल-वृष्टि करे।
अन्तरिक्ष-पृथिवी का उत्तम, ज्ञान सदा सुख-सृष्टि करे ॥ ३ ॥

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥ ४ ॥ —ऋग्० ५।५१।१२॥

भावार्थ—

मङ्गलमय प्रभु शान्तिप्रदायक, तुम ही सकल भुवन के नाथ।
करते चन्द्र सोम-रस-पूरित, गतिमय वायु बनाते आप।
वेदज्ञान रक्षक सर्वेश्वर, तेरा ही हम धरते ध्यान।
सुत आदित्य ब्रह्मचारी हों, करो हमारा नित कल्याण ॥ ४ ॥

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ५ ॥ —ऋग्० ५।५१।१३॥

भावार्थ—

विश्वनरों में व्यापक ज्ञानी, प्रभु कल्याण अशेष करें।
सब विद्वान् आज हम सबको, शुभकारी उपदेश करें।

सर्व हितैषी विज्ञानी-जन, रक्षक बन सुख दान करें।
दुष्ट-दानवों को जो दलते, रूद्र पाप से त्राण करें॥५॥

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि॥६॥

—ऋग्० ५।५१।१४॥

भावार्थ—

होवें प्राण-अपान हमारे, पुष्ट देह में सुखकारी।
धन-सम्पत् परिपूर्ण सुपथ की, प्रभो हरो बाधा सारी।
विघ्न-विनाशक हे अविनाशी ! सदा स्वस्ति कल्याण करो।
सदा हमारे लिये भद्र हों, विद्युत्-अग्नि विधान करो॥६

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि॥७॥

—ऋग्० ५।५१।१५॥

भावार्थ—

हे ईश्वर ! हम सूर्यचन्द्र-सम, स्वस्ति सुपथ-अनुसरण करें।
तेजस्वी उपकारक शुभकर, जीवन का ही वरण करें।
दानशील विद्वान् अहिंसक, श्रेष्ठ जनों का संग पावें।
बार-बार उनकी सङ्गति पा, उनके रंग में रंग जावें॥७॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः। ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥८॥

—ऋग्० ७।३५।१५॥

भावार्थ—

सङ्गतियोग्य यज्ञ के प्रेमी, यज्ञशील जीवन वाले।
विद्वानों में जन-जन के जो, आदर को पाने वाले।
विमल यशस्वी सत्यनिष्ठ वे, अतुल सुकीर्ति प्रदान करें।
सदुपदेश द्वारा कुमार्ग से, रक्षा कर कल्याण करें॥ ८॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः। उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये॥ ९ ॥

—ऋग० १०।६३।३॥

भावार्थ—

जिनके लिये सदा धरती माँ मधुर अन्न-रस उपजावे।
मेघों से परिपूर्ण अखण्डित-अन्तरिक्ष जल बरसावे।
उन बलिष्ठ कर्मठ शुभकर्मी, विद्वानों का यश गावें।
धरती माँ के श्रेष्ठ सुतों की, सङ्गति से मङ्गल पावें॥ ९ ॥

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये॥ १० ॥

—ऋग० १०।६३।४॥

भावार्थ—

मनुजमात्र के योगक्षेम पर, सदा दृष्टि जो रखते हैं।
सावधान विद्वान् पूज्य वे, प्राप्त अमर पद करते हैं।
ज्ञान मार्ग के पथिक बुद्धि के, धनिक महाज्ञानी निष्पाप।
होकर पूर्ण प्रतिष्ठित जग में, भरते हैं खुशियाँ उल्लास॥ १० ॥

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्। ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥ ११ ॥ —ऋग्० १०।६३।५॥

भावार्थ—

जो सम्राट्-तुल्य तेजस्वी, बढ़ते और बढ़ाते हैं।
छोड़ कुटिलता शुभकर्मों को, करते नहीं अघाते हैं।
उच्च पदों को जो पाते हों, ईश पुत्र विद्वान् महान्।
स्वस्ति हेतु ईश्वर का उनका, करें नमन सेवा सम्मान ॥ ११ ॥

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यति ष्ठन्।को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥ १२ ॥ —ऋग्० १०।६३।६॥

भावार्थ—

करता सिद्ध कौन है स्तुति को, कौन यज्ञ को सफल करे।
सब विद्वान् मनुष्यों जानो, वही ईश जो दुःख हरे।
जिसकी स्तुति उपासना करते, विविध जन्म-धारक सब जीव।
वही छुड़ाता पाप-ताप से, करता नित कल्याण अतीव ॥ १२

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः। त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त्त सुपथा स्वस्तये ॥ १३ ॥ —ऋग्० १०।६३।७॥

जो सूर्यादि-तेज-धारक प्रभु, सृष्टि-यज्ञ जिस प्रथम किया।
मन अरु सप्त इन्द्रियों वाला, यज्ञ-सुसाधक देह दिया।
इस यज्ञीय देह से अपने, ईश-पुत्र! शुभ कर्म करो।
सदा अभय दो सुख बरसाओ, स्वस्ति-सुपथ को सुगम करो ॥

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर जगतश्च मन्तवः । ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥ १४ ॥ —ऋग् ० १० । ६३ । ८ ॥

भावार्थ—

जो विद्वान् मनस्वी न्यायी, पक्षपात से रहित सुजन।
जड़-चेतन मय सकल जगत् पर, करते हैं सुखप्रद शासन।
किये अनकिये पाप कर्म से, करें हमारा वे रक्षण।
जिससे हो कल्याण हमारा, शुद्ध बुद्ध हो यह तन मन ॥ १४ ॥

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥ १५ ॥ —ऋग् ० १० । ६३ । ९ ॥

भावार्थ—

शुद्धात्मा स्तवनीय पाप-हर, शुभ-कर्मी प्रतिभाशाली।
सौर जगत्-ज्ञानी, तेजस्वी, सृजन-शील शुभ-हितकारी।
प्राण और जल विद्या वाले, द्यु-पृथिवी-ज्ञाता विद्वन्।
संघर्षों में तुम्हें पुकारें, सुख-ऐश्वर्य-लाभ हित हम ॥ १५ ॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्त्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ॥ १६ ॥ —ऋग् ० १० । ६३ । १० ॥

प्रभो ! आप द्वारा बहुरक्षित, विस्तृत सुखद ज्योति-भरपूर।
त्रुटि से रहित सुनिर्मित दैवी, सुदृढ छिद्र-दोषों से दूर।
भवसागर से पार उतारे, ज्ञान और गति से सम्पन्न।
ऐसी मानवदेह-नाव पर, चढ़ें मोक्षपद पा हों धन्य ॥ १६ ॥

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥ १७॥

—ऋग्० १०।६३।११॥

भावार्थ—

हे यजनीय श्रेष्ठ विद्वानों! दो ऐसा उत्तम उपदेश।
रक्षा होवे, निकट न आवे, कभी दुःखद-दुर्गति-लवलेश।
सत्य-हृदय से तुम्हें पुकारें, करें प्रशंसामय गुणगान।
सुनकर विनय हमारी विद्वन्, रक्षा करो और कल्याण॥ १७॥

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद् युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये॥ १८॥

—ऋग्० १०।६३।१२॥

भावार्थ—

हर लो रोगजनक-निर्बलता, यज्ञ विमुखता के सब भाव।
दानहीनता दूर हटाकर, भरो त्याग के सब शुभ भाव।
जन्म-जन्म के हम पापी हैं, कृपा करो हे सब विद्वान्!
पाप-द्वेष-दुर्बुद्धि दूर कर, सकल सुखों का दो वरदान॥ १८॥

अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि। यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये॥ १९॥

—ऋग्० १०।६३।१३॥

भावार्थ–

हे विद्वन् ! जिस जनसमूह को, न्याय-सुपथ तुम दिखलाते ।
वे निर्बाध अहिंसित होकर, नित उन्नति करते जाते ।
करते हुए धर्म का पालन, पुत्र-पौत्र से बढ़ते हैं !
सब दुर्गुण-दुर्व्यसन त्यागकर, स्वस्ति-सुपथ पर बढ़ते हैं ॥ १९ ॥

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥ २० ॥ —ऋग्० १० । ६३ । १४ ॥

भावार्थ–

हितकारक धन-अन्न प्राप्ति में, शूरोचित संग्रामों में ।
वायुतुल्य विद्वान् वीर तुम, जिसे बचाते प्राणों से ।
उषःकाल से कर्मनिरत इस, दृढ़ नरतन-रथ पर चढ़कर ।
मनुजदेह को सफल करें प्रभु ! फल पुरुषारथ का चखकर ॥ २० ॥

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यऽप्सु वृजने स्वर्वति। स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥ २१ ॥ —ऋग्० १० । ६३ । १५ ॥

सार्वजनिक-पथ मरुस्थलों में, जलप्रदेश, नभमण्डल में ।
विद्वानों सन्मार्ग दिखाओ, धर्म-युद्ध के हर स्थल में ।
कृपा आपकी से भगवन् हम, भोग्य धनादिक प्रचुर गहें ।
पुत्रोत्पादक नारीजन के, स्वस्थ सभी जननाङ्ग रहें ॥ २१ ॥

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति। सा नो अमा सो अरणे निपातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥ २२ ॥ —ऋग्० १० । ६३ । १६ ॥

भावार्थ—

जो धन-धान्य-पूर्ण अति उत्तम, मातृभूमि अति प्यारी है।
अतिकल्याण-युक्त पथ जिसके, कण-कण सौम्य सुखारी है।
वही हमारा सुन्दर घर है, जीवनप्रद शुभ शान्त निवास।
प्रभु देवों से रक्षित यह भू, हमको दे नित हर्षोल्लास ॥ २२ ॥

इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा वस्तेनऽईशत माघशंसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥ २३ ॥ —यजु० १।१॥

भावार्थ—

हे रक्षक व्यापक जगदीश्वर, शरण आपकी आते हैं।
बल-अन्नादिक-भोग्य-वस्तु की, तुमसे आश लगाते हैं।
बढ़ें वायु-सम, यज्ञादिक सब, श्रेष्ठ कर्म निष्काम करें।
शुभ कर्मों के प्रेरक प्रभुवर! तेरा तुझे प्रदान करें।
गौ अवध्य हों, राष्ट्र-सुवर्धक, प्रजायुक्त अतिपुष्ट दुधार।
स्वच्छदेह हों, रोगशून्य हों, होय दुग्ध पर जन-अधिकार।
हिंसक-चोर-पाप के इच्छुक, कभी न गो-भू-स्वामी हों।
जिससे बढ़े गाय-भूरक्षण, गोप-भूप शुभगामी हों।
यज्ञादिक शुभकर्म करें जो, उनका नाथ! करें कल्याण।
उनकी उनके पशुधनादि की, रक्षा करो सदा भगवान्!
प्रभो पुकारें, शरण राखिए, करो इष्ट-अन्नादि-प्रदान।
शुभकर्मों में हमें प्रेरिए, रक्षक-बल का दें वरदान ॥ २३ ॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽपरीतासऽउद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥ २४॥

—यजुः० २५।१४॥

भावार्थ—

जो नव कर्म-ज्ञान-उद्भावक, बाधाहीन वेद-अविरुद्ध।
पावें प्रभु हम सब दिशि से वे, भद्र कर्म— संकल्प विशुद्ध।
हर प्रकार उन्नति-पथ में हों, सदा सहायक ही विद्वान्।
तज प्रमाद, वे हों सचेत नित, किया करें रक्षा कल्याण॥ २४॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानां रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानां सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ २५॥

—यजु० २५।१५॥

निश्छल सरल आचरण वाले, प्रभु जो दानशील विद्वान्।
उनकी कल्याणी शुभमति हम, पावें विद्यादिक शुभदान।
आयुर्ज्ञान जानने वाले, सखा हमारे हों विद्वान्।
दीर्घ-आयु की विधि-दर्शावें, सिखलावें जीवन-निर्माण॥ २५॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ २६॥

—यजुः० २५।१८॥

सब ऐश्वर्यों के स्वामी प्रभु, सकल-चराचर-पालनहार।
करते तुम मति तुष्ट-पुष्ट हो, रक्षा-हित हम रहे पुकार।
हमें ज्ञान-धन-वृद्धि हेतु नित, प्रेरो जगपोषक भगवान्!
सर्वशक्तिमन् रक्षक पालक! करो सदा रक्षण कल्याण॥ २६॥

स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ २७ ॥ —यजः० १५।१९ ॥

भावार्थ—

शुभ-ऐश्वर्यशील परमेश्वर, परम यशस्वी दयानिधान।
सुख-ऐश्वर्य हमें नित देवें, पोषक प्रभु सर्वज्ञ महान्।
कष्टनिवारक भवतारक विभु, करें सदा सब विधि कल्याण।
करें कृपावर्षण सुखवर्षण, कृपासिन्धु जगपति भगवान् ॥ २७ ॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर् व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ २७ ॥ —यजुः० २५।२१ ॥

भावार्थ—

भद्र-विधायक परमदेव प्रभु !, दिव्यगुणी याजक विद्वान्।
भद्र सुनें कानों से देखें, आँखों से हम भद्र महान्।
दृढ़ नीरोग सबल अङ्गों से, पुष्ट-शरीरों से भगवन् !
देव-हितैषी जीवन पावें, करें आपका सदा स्तवन ॥ २८

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ २९ ॥ —साम० पूर्वा० १।१ ॥

भावार्थ—

स्वयं-प्रकाश-स्वरूप विधाता, कृपासिन्धु हे करुणागार !
आओ कष्ट मिटाओ, हमको, दो अभीष्ट फल, सुनो पुकार।
मनोकामना-पूरक प्रभुवर, हृदयासन पर रहो विराज।
आकर फिर तुम लौट न जाना, सिद्ध करो हमरे शुभकाज ॥ २९

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः।
देवेभिर्मानुषे जने ॥ ३० ॥ —साम० पूर्वा० १।२॥

भावार्थ—

ज्ञानरूप तुम विश्व-विधाता, सकल-जगत्-हितकारक नाथ।
यज्ञरूप सब श्रेष्ठ कर्म के, प्रेरक पूरक प्रभुवर आप।
परम दयालो ! सदा आप हो, करते दिव्य-गुणों का दान।
जिनको पा सब मननशील-जन, तुम्हें हृदय में देते स्थान ॥ ३० ॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥ ३१ ॥
—अथर्व० १।१।१॥

भावार्थ—

सत्त्व-रजस्-तम त्रिगुण प्रकृति जो, 'महान्' आदि हैं सप्तविकार।
होकर विविध-रूप-परिवर्तित, बनते सकल-सृष्टि-आधार।
इसी तत्त्व-समुदय से मेरा, प्रभु यह निर्मित हुआ शरीर।
प्रजापते वेदों के रक्षक ! आज इसे कर दो बलशील ॥ ३१ ॥

॥ इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथ शान्तिकरणम्

ओ३म् शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥ १ ॥ —ऋग्० ७।३५।१॥

भावार्थ—

प्रभो ! रक्षणादिक द्वारा हों, विद्युत् और अग्नि सुखधाम।
भोग्य-वस्तु-दाता विद्युत्-जल, हमें करें नित शान्ति-प्रदान।
रोग-भीतिहर विद्युत्-औषध, दें ऐश्वर्य, करें कल्याण।
अन्नादिक उपजाकर विद्युत्, वायु करे मङ्गल-अभिदान ॥ १

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ २ ॥ —ऋग्० ७।३५।२॥

शुभ-ऐश्वर्य, प्रशंसा-शिक्षा, धारणवती-बुद्धि, धन-धान्य—
सत्यनिष्ठ संयमित सुजन के, सद्-विचार उपदेश सुमान्य—
और न्याय ही करने वाले, अति प्रसिद्ध जो भी जन हों—
प्रभो हमारे लिए सभी ये, सदा शान्तिकर सुखकर हों ॥ २

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ३ ॥ —ऋग्० ७।३५।३॥

भावार्थ—

सबका पोषक-धारक प्रभुवर, हमें शान्ति-सुख दान करे।
मधुर पुष्टिकर अन्न आदि से, पृथिवी प्राण प्रदान करे।
विस्तृत अन्तरिक्ष-भू, पर्वत—मेघ शान्ति-सुखदायक हों।
विद्वानों के सदुपदेश नित, शान्ति-सुपथ-परिचायक हों॥ ३॥

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु। शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥ ४ ॥

—ऋग्० ६।३५।४॥

भावार्थ—

परम ज्ञानमय ज्योतिपुञ्ज प्रभु, तेजस्वी नेता विद्वान्—
प्राण-अपान, निशाकर-दिनकर, करें हमें सुख-शान्ति प्रदान।
श्रेष्ठकर्मियों के सुकृतों से, हमें शान्ति-सुख का हो लाभ।
शीतल मन्द सुगन्ध वायु नित, बहें करें मङ्गल-सुखसाज॥ ४॥

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥ ५ ॥

—ऋग्० ७।३५।५॥

भावार्थ—

पूर्व-प्रशंसित द्यू-पृथिवी हों, हमें शान्ति-सुख देनेहार।
सूर्य-चन्द्रयुत अन्तरिक्ष हों, नेत्र-ज्योति-सुख का दातार।
ओषध और वनस्पतियां हों, शान्तिप्रदायक रोगनिवार।
प्रजा-सुपालक विजयी राजा, प्रभो! करे नित सुख-विस्तार॥ ५॥

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः। शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥ ६ ॥ —ऋग्० ७।३५।६॥

भावार्थ—

दिव्यगुणी ऐश्वर्यद सूरज, सुखकर हो वसुओं के साथ।
सूर्य-रश्मियों सहित प्रशंसित, जल हो हमें शान्तिकर नाथ!
प्राणयुक्त सन्ताप-निवारक, आत्मा नित श्रेयस्कर हो।
शुभवाणी विद्वान् सुनावें, सत्य-असत्य-विवेचक जो ॥ ६ ॥

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥ ७ ॥ —ऋग्० ७।३५।७॥

भावार्थ—

प्रभु! ओषधपति-सोमलतादिक, वेदमन्त्र, ओषध-समुदाय।
वेदि-इष्टिका, यज्ञवेदि शुभ, विविध यज्ञ हों शान्ति-सुखाय।
यज्ञवेदि के सु-स्तम्भों के, सब परिमाण शुभद होवें।
यज्ञ और यज्ञीय वस्तु सब, हमें शान्ति सुखकर होवें ॥ ७ ॥

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु। शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥ ८ ॥ —ऋग्० ७।३५।८॥

वस्तु-वस्तु-सन्दर्शक रवि के, उदय हमें सुखदायी हों।
चारों दिशा प्रकाशित होकर, मङ्गल-मोद-प्रदायी हों।
स्थिर वैभवयुत पर्वत होवें, हमें सदा कल्याण-जनक।
स्पन्दन-शील सिन्धु, जल होवें, प्रभो! शान्ति-शुभ-सम्पादक ॥ ८

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ ९ ॥

—ऋग्० ७ । ३५ । ९ ॥

भावार्थ—

विदुषी माता सत्कर्मों से, पृथिवी अन्न-आदि के साथ—
करें सदा कल्याण हमारा, विद्वानों के श्रेष्ठ-विचार ।
व्यापनशील विष्णु परमेश्वर, पोषक ब्रह्मचर्य-व्यवहार—
सुखद-भविष्य-विधायक होवें, करे वायु भी सुख-सञ्चार ॥ ९ ॥

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः । शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥१० ॥

—ऋग्० ७ । ३५ । १० ॥

भावार्थ—

मङ्गलमय हों जग-उत्पादक, दिव्यगुणी रक्षक भगवान् ।
प्रचुर प्रभामय उषःकाल के, सुखकारी हों रश्मि-वितान ।
पृथिवीरूप क्षेत्र के पालक, भद्र-स्वभाव कृषक भूपाल—
प्रभो ! प्रजा-हित कर्म-निरत हों, करें मेघ कल्याण-प्रसार ॥ १० ॥

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु । शमभिषाचः शमुरातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥ ११ ॥

—ऋग्० ७ । ३५ । ११ ॥

भावार्थ—

सरस्वती = विद्याधिष्ठात्री— वाणी, बुद्धि-समन्वित नाथ !
और ज्ञानदाता सब विद्वन्, हमें शान्ति दें हर त्रयताप ।

आत्म-तत्त्वज्ञाता, दानी-जन, करें हमारा नित कल्याण।
द्यू-पृथिवी-अन्तरिक्ष लोक के, सब पदार्थ देवें सुखदान ॥ ११ ॥

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥ १२ ॥

—ऋग्० ७।३५।१२॥

भावार्थ—

सत्यनिष्ठ-जन सुपथ दिखाएं, श्रेष्ठ अश्व हों गाय दुधार।
उत्तम साधन-युक्त सुकर्मा, शिल्पी-जन हों हमें उदार।
पालक-अनुभवशील-वृद्धजन, सत्कर्मों में दें सहयोग।
प्रभो ! सभी से हमें प्राप्त हों, सुख-कल्याण-शान्तिमय भोग ॥ १२

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः। शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥ १३ ॥

—ऋग्० ७।३५।१३॥

भावार्थ—

जिसके एक चरण में सब जग, अज दाता शङ्कर भगवान् !
अन्तरिक्ष-स्थानीय मेघ सब, जल-परिपूर्ण समुद्र-वितान—
पार जलों के जो ले जावें, बिना पाँव के वे जल-यान—
और दिव्यजन से रक्षित गौ, हमें सदा हों सुखद महान् ॥ १३ ॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥

—यजुः० ३६।८॥

भावार्थ—

हे समग्र-ऐश्वर्ययुक्त प्रभु !, सकल चराचर तेरा राज।
ज्योति तुम्हारी से जगमग जग, कण-कण में तुम रहे विराज।

चौपाए गौ आदि नाथ ! जो, द्विपद मनुष्य आदि धृत-प्राण—
कृपा-दृष्टि हम सब पर कीजै, दो कल्याण-शान्ति-सुखदान ॥ १४ ॥

शन्नो वातः पवतां शन्नस्तपतु सूर्य्यः ।
शन्नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु ॥ १५ ॥

—यजुः० ३६ । १० ॥

भावार्थ—

प्रभो ! प्राणप्रद-पवन हमें नित, सौम्य सुखद पावन होवे ।
तपे सूर्य होकर हितकारी, जीवन का साधन होवे ।
गर्जन करता दिव्य-शक्तिमय, मेघ यथोचित जल बरसे ।
जिससे शस्य-श्यामला होकर वसुधा शान्ति-सुधा सरसे ॥ १५ ॥

अहानि शं भवन्तु नः शं रात्रीः प्रति धीयताम् । शं नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या । शन्नऽइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः ॥ १६ ॥

—यजु० ३६ । ११ ॥

प्रभो ! दिवस-रात्री सुखकर हों, विद्युदग्नि दें रक्षा-दान ।
सब ग्रहणीय सुखों के दाता, विद्युत्-जल हों सुखद-महान् ।
विद्युत्-पृथिवी अन्न-आदि को, उपजाकर दें जीवन-दान ।
विद्युत्-ओषध करें हमारा, रोग-नाश कर नित कल्याण ॥ १६ ॥

शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ १७ ॥

—यजु० ३६ । १२ ॥

भावार्थ—

जिसकी एक घूंट ही भगवन् ! करे शान्तिमय अन्तस्तल ।
वह अभीष्ट-सुखसाधक होवे, दिव्य-शक्तियों वाला जल ।

हमें पेय हो, रोग हरे सब, करे देह का नित रक्षण ।
साधन कार्य-सिद्धि का होकर, करे सर्वतः सुख-वर्षण ॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १८ ॥ —यजु० ३६ । १७ ॥

अन्तरिक्ष-द्यू-पृथिवीलोक हों, प्रभो ! शान्तिमय सुखमय स्थान
ओषधि, वृक्ष-वनस्पति, जल दे, शान्ति-पुष्टि सन्तुष्टि महान् ।
सकल पदार्थ, वेद की वाणी, शान्तिविधायक हों विद्वान् ।
सबजग शान्ति शान्ति जो फैले, मुझे शान्ति वह दो भगवान् ॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतम् अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥१९ । —यजु० ३६ । २४ ॥

भावार्थ—

प्रभो ! सकल-जग-स्रष्टा-द्रष्टा, शुद्ध भक्त-हितकर जगनाथ !
सृष्टि-पूर्व भी व्याप्त तुम्ही थे, अब भी व्याप रहे तुम आप ।
कृपा आपकी से प्रभुवर हम, सौ वर्षों तक देखें देव !
जीवें ध्यान धरें हम तेरा, सौ वर्षों तक बिना कुटेव ।
सौ वर्षों तक इन कानों से, मधुर वेद-रस पान करें ।
सौ वर्षों तक इस वाणी से, तेरा ही गुणगान करें ।
दो वरदान दया के दानी, जीवन में हो गौरव मान ।
शतवर्षों से अधिक आयु पा, रहें, स्वस्थ हम हे भगवान् ॥ १९

(शिवसंकल्प-मन्त्र)

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २० ॥ —यजु० ३४।१॥

प्रभो जागते हुए दूर तक, इधर-उधर जो जाता है।
दिव्यशक्ति वह सोते में भी, वैसे ही इठलाता है।
दूर-दूर तक जाने वाला, तेजों में जो तेज प्रधान।
शिवसङ्कल्पयुक्त वह नित हो, मेरा मन शङ्कर भगवान् ॥ २० ॥

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २१ ॥ —यजु० ३४।२॥

भावार्थ—

जिससे कर्मठ मननशील-जन, श्रेष्ठ कर्म सब करते हैं।
धीर-वीर-बलशाली जिससे, विजय युद्ध में करते हैं।
प्राणि-मात्र का आन्तर-इन्द्रिय, जो अद्भुत-बल, पूज्य महान्।
शिव-सङ्कल्पयुक्त वह नित हो, मेरा मन शङ्कर भगवान् ॥ २१ ॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्नऽऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २२ ॥ —यजु० ३४।२॥

जिसके बिना मनुज कोई भी, कर्म नहीं कर पाता है।
जो उत्कृष्ट ज्ञान का साधन, अन्यों को चेताता है।
सकल प्रजा में अविनाशी सा, धैर्यवृत्ति जो ज्योतिर्मान्।
शिव-सङ्कल्पयुक्त वह नित हो, मेरा मन शङ्कर भगवान् ॥ २२ ॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २३ ॥ —यजु० ३४।४॥

भावार्थ–

जिस अविनाश-तत्त्व से योगी, तीन काल के हों ज्ञाता।
बुद्धि, ज्ञान की पाँच इन्द्रियों, आत्मा से जिसका नाता।
जिससे नित्य बढ़ा करता है, सब विधि योग-यज्ञ-विज्ञान।
शिव-सङ्कल्पयुक्त वह नित हो, मेरा मन शङ्कर भगवान् ॥ २३ ॥

यस्मिन्नृचः साम यजूंषि, यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २४ ॥ —यजु० ३४।५॥

जिसमें ऋग्-यजु-साम-अथर्वा, चारों वेद उपस्थित हैं।
जैसे रथ की चक्रनाभि में, होते अरे प्रतिष्ठित हैं।
ओत-प्रोत है प्राणि-मात्र का, जिसमें चिन्तन-शक्ति-वितान।
शिव-सङ्कल्पयुक्त वह नित हो, मेरा मन शङ्कर भगवान् ॥ २४ ॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर् वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २५ ॥ —यजु० ३४।६॥

भावार्थ–

कुशल-सारथी ज्यों घोड़ों को, जिधर चाहता ले जाता।
बली-मनुष्यों को निज-बल से, जो वैसे ही भटकाता।
नित्य-नवीन, हृदय में रहता, चञ्चल, तीव्रगतिक बलवान्।
शिव-सङ्कल्पयुक्त वह नित हो, मेरा मन शङ्कर भगवान् ॥ २५ ॥

स नः पवस्व शं गवे, शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ २६ ॥ —साम० उ० १।१।१॥

भावार्थ—

हे ऐश्वर्ययुक्त ज्योतिर्मय! करो हमें पावन पवमान!
कीजै गाय आदि पशुगण का, और सकल जन का कल्याण।
अश्व आदि वाहन-साधन जो, उन्हें नाथ! दीजै सुखदान।
हममें, सब ओषध में प्रभुवर! कीजै सदा, शान्ति-आधान ॥ २६ ॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्ताद् उत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥ २७ ॥ —अथर्व १९।१५।५॥

भावार्थ—

अन्तरिक्ष-द्यू-पृथिवीलोक में, हो न उपद्रव का लवलेश।
हमको सदा अभयकर हों ये, अभयङ्कर सुखकर सर्वेश!
प्रभुवर! दृष्टादृष्ट-नतोन्नत, सभी स्थान सुखमय होवें।
आगे-पीछे ऊपर-नीचे, सब दिशि हमें अभय होवें ॥ २७ ॥

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥ २७ ॥ —अथर्व० १९।१५।६।

भव-भय-भञ्जन! नित्य निरञ्जन! हे शङ्कर! अभयङ्कर नाथ!
मित्र-शत्रु, जाने-अनजाने, सबसे हमें अभय हो प्राप्त।
प्रतिपल प्रभो! अभयकर होवे, दिन हो अभय, अभय हो रात।
सभी दिशा हों मित्र हमारी, विचरें अभय, शान्ति के साथ ॥ २८ ॥

॥इति शान्तिकरणम्॥

अथ दैनिक-अग्निहोत्र-विधिः

अग्न्याधान-मन्त्र

निम्न मन्त्र को बोलकर दियासलाई से दीपक प्रज्वलित करें—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः ॥ १ ॥

—गोभिल गृह्य० १ । १ । ११ ॥

फिर स्रुवे (चमचे) में कपूर रख कर या कपूर के अभाव में गोले की फाँक, रुई की बत्ती अथवा समिधाओं के शिरों पर घृत लगाकर उनमें दीपक से अग्नि प्रज्वलित करते हुए निम्न मन्त्र को बोलकर इस अग्नि को हवनकुण्ड में स्थापित करें—

ओ३म् भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ २ ॥

—यजुः० ३ । ५ ॥

भावार्थ—

जग के रक्षक **'ओम्'** पिता प्रिय, प्राणरूप **'भूः'** भाते हो ।
दुःखहर्त्ता हो **'भुवः'** आप ही, **'स्वः'** सुखरूप कहाते हो ॥ १ ॥

सर्वाधार सकल जग-व्यापक, बृहता से आकाश समान ।
विस्तृतता से पृथिवि तुल्य तुम, जो देवों का यज्ञस्थान ।
इसी पृथिवि के पृष्ठभाग पर, खाद्य-अन्न के प्रापण हेत ।
धरता हूँ अन्नाद-अग्नि को, यज्ञ कुण्ड में प्रेम-समेत ॥ २ ॥

अग्नि-प्रदीपन-मन्त्र

निम्न मन्त्र का उच्चारण कर हवनकुण्ड की अग्नि को खूब प्रज्वलित करें—

ओ३म् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते संसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽ अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥

—यजुः० १५।५४॥

भावार्थ—

अग्नि तुल्य तेजस्वी विद्वन्, अग्नि-उपासक हे यजमान !
पा सुरीति से चेतनता को, जागृत हो, कर लो उत्थान ।
करो सदा ही इष्ट और, आपूर्त कर्म का सम्पादन ।
उत्तम यज्ञवेदि पर बैठें, याजक और पुरोहितजन ॥

समिदाधान-मन्त्र

तत्पश्चात् आठ-आठ अंगुल लम्बी तीन समिधाएँ घृत में भिगो-कर,एक एक करके क्रमशः निम्नलिखित मन्त्रों से अग्नि-कुण्ड में तीन आहुतियां दें—

ओ३म् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर् ब्रह्मवर्चसेन अन्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे — इदन्न मम ॥ १ ॥ —आश्व० गृ० १।१०।१२॥

भावार्थ— (इस मन्त्र से पहली समीधा की आहुति दें)

वस्तु-वस्तु में विद्यमान विभु, तव हित आत्मा समिधारूप ।
आत्मा में तेरा प्रकाश हो, बढ़ें तुम्हीं से हे जगभूप !

बढा प्रजा-पशु-ब्रह्मतेज से, अन्न आदि से प्रभु हमको ।
जातवेद-ज्ञानस्वरूप-प्रभु, आहुति यह अर्पित तुमको ॥ १ ॥

ओ३म् समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन ॥ १ ॥ —यजु:० ३ । १ ॥

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे— इदन्न मम ॥ ३ ॥ —यजु:० ३ । २ ॥

(इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा की आहुति दें)

भावार्थ—

अग्निरूप अतिथी को घृत से, समिधा से अति चण्ड करें ।
मिष्ट-रोगहर-पुष्ट-सुगन्धित, हवि से इसे अखण्ड करें ॥ २ ॥

सब उत्पन्न वस्तुओं का जो, चक्षुज्ञान करवाता है ।
सुप्रदीप्त शोधक हितकारी, यज्ञ-अग्नि यह भाता है ।
अति उत्कृष्ट तीव्रतर घृत से, याजक इसमें होम करें ।
स्वार्थभाव तजकर श्रद्धा से, जातवेद की भेंट धरें ॥ ३ ॥

ओ३म् तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि । बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा । इदमग्नयेऽङ्गिरसे — इदन्न मम ॥ ४ ॥ —यजु:० ३ । ३ ॥

(इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति दें)

व्यापनशील विभेदक योजक, जो सब वस्तु दिखाता है ।
उसी अग्नि को घृत समिधा से, याजक स्वयं बढ़ाता है ।
वेदप्रकाशक देव अङ्गिरा, मेरी समिधा है स्वीकार ।
स्वार्थभाव से रहित समर्पित, फल इसका हो पर उपकार ॥ ४ ॥

पञ्च-घृताहुति-मन्त्र

इसके पश्चात् निम्न मन्त्र को पाँच बार बोलकर एक एक करके घृत की पाँच आहुति प्रज्वलित अग्नि में देवें-

ओ३म् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर् ब्रह्मवर्चसेन अन्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे— इदन्न मम । —आश्व० गृह्य० ।१।१०।१२॥

अग्निदेव घृत-इध्म प्राप्तकर, यथा तीव्रतर हो जाते ।
वैसे कृपा आपकी पा प्रभु, हम समृद्ध हैं हो जाते ।
ब्रह्मतेज-सन्तति-पशु-धन से, भक्ष्य-शक्ति से युत कीजै ।
जातवेद तेरे हित अर्पित, पञ्चाहुति स्वीकृत कीजै ॥
(घृत से अग्नि, वीर्य से वैसे, बढ़े पञ्च ज्ञानेन्द्रिय बल ।
जीवनभर उपकार करें ये, बना रहे इनका सम्बल ॥)

जल-प्रोक्षण-मन्त्र

तत्पश्चात् दाहिने हाथ की अञ्जलि में जल लेकर निम्न मन्त्रों से हवनकुण्ड के चारों ओर बताई गई विधि से जल छिड़कें-

ओ३म् अदितेऽनुमन्यस्व ॥ १ ॥

(इससे कुण्ड के पूर्व भाग में जल छिड़कें— दक्षिण से उत्तर की ओर)

ओ३म् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥ २ ॥

(इससे कुण्ड के पश्चिम भाग में जल छिड़कें— दक्षिण से उत्तर की ओर)

ओ३म् सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥ ३ ॥

(इससे उत्तर भाग में जल छिड़कें— पश्चिम से पूर्व की ओर)

—गोभिल गृ०१।३।१-३॥

भावार्थ—

तुम्हीं अखण्ड एकरस प्रभुवर, निज अनुमत ही मति कीजै।
शुभ-हितकारी-बुद्धि-प्रदाता, सुमति आप हमको दीजै।
(तुम सा कौन जगत् में दानी, तुम सम कौन दया-आगार।)
हो प्रसन्न प्रभु ज्ञान दीजिए,तुम सब-विधि-विद्या-भण्डार ॥ १-३ ॥

ओ३म् देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥ ४ ॥ —यजुः० ३०। १ ॥

(इससे पूर्व से आरम्भ करके कुण्ड के चारों ओर जल छिड़कें)

भावार्थ—

सविता देव, यज्ञ के प्रेरक, सफल करो यह यज्ञ समूल।
ऐश्वर्यों के लिए बढ़ाओ, याजक को होकर अनुकुल।
विद्याधार बुद्धि के पावक, करो बुद्धि को पावन आप।
दिव्य-पिता वाणी के अधिपति, वाणी में हो सदा मिठास ॥ ४ ॥

आघार-आज्याहुति-मन्त्र

(निम्न मन्त्र से कुण्ड के उत्तर भाग में प्रज्वलित समिधाओं पर घी की आहुति पश्चिम से पूर्व की ओर धार बाँधकर लम्बवत् दें)

ओ३म् अग्नये स्वाहा। इदमग्नये-इदन्न मम ॥ २ ॥ —यजुः० २२। २७ ॥

भावार्थ—

अग्निरूप जगदीश प्रकाशक, दुःख-विनाशक ज्ञान-स्वरूप !
जगदुपकार हेतु अर्पित है, श्रद्धामय यह भेंट अनूप ॥ १ ॥

(निम्न मन्त्र से कुण्ड के दक्षिण भाग में प्रज्वलित समिधाओं पर घी की आहुति पश्चिम से पूर्व की ओर धार बाँधकर लम्बवत् दें)–

ओ३म् सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय–इदन्न मम ॥ २ ॥

—यजुः० २२ । २७ ॥

भावार्थ–

न्यायाधीश परम सुख-दाता, सोमस्वरूप शान्ति के धाम ।
नाथ ! तुम्हारा तुम को अर्पित, क्योंकर इसमें मेरा नाम ॥ २ ॥

आज्यभागाहुति-मन्त्र

निम्न दो मन्त्रों से वेदी के मध्यभाग में प्रज्वलित अग्नि में घी की दो आहुतियां देवें—

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये—इदन्न मम ॥ १ ॥

—यजुः० २२ । ३२ ॥

भावार्थ–

सकल प्रजा के प्रतिपल पालक, पोषक रक्षक जगदाधार ।
तेरा तुझे सौंपते प्रभुवर, इस पर क्या मेरा अधिकार ? ॥ १ ॥

ओ३म् इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय–इदन्न मम ॥ २ ॥

—यजुः० २२ । २७ ॥

भावार्थ–

इन्द्र परम-ऐश्वर्य विधाता, धनदाता भक्तों के नाथ ।
जग कल्याण हेतु यह आहुति, अर्पित है श्रद्धा के साथ ॥ २ ॥

दैनिक अग्निहोत्र की प्रधान आहुतियां

प्रात:कालीन आहुतियों के मन्त्र

(इन मन्त्रों से घी और सामग्री की आहुतियां देवें)

ओ३म् सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ १ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

भावार्थ—

सकल चराचर का जो आत्मा, लोक-प्रकाशक ज्योति-स्वरूप ।
उस ही प्राणरूप ईश्वर को, अर्पित आहुति श्रद्धा रूप ॥ २ ॥

ओ३म् सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

भावार्थ—

हे ज्योतिर्मय ज्ञान-रूप प्रभु, वेदज्ञान-विस्तारक आप ।
यह यज्ञीय-द्रव्य तव अर्पण, करो भक्त पर अनुग्रह नाथ ॥ २ ॥

ओ३म् ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

स्वयं-प्रकाशमान परमेश्वर, तू ही जगत्-प्रकाशक है ।
घृत-शाकल्य तुझे ही अर्पित, तू ही जग का शासक है ॥ ३ ॥

**ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या ।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥** —यजुः० ३ । १० ॥

दिव्यगुणी-सूर्यादिलोक में, जीवों में जो व्याप रहा ।
प्रभापूर्ण इस उषा-मध्य में, ईश्वर वही प्रकाश रहा ।
भक्त-सुसेवित सर्वात्मा प्रभु, कृपादृष्टि हम पर कीजै ।
जग हितार्थ यह हवि अर्पित है, विद्यादिक शुभ गुण दीजै ॥ ४ ॥

सांयकालीन आहुतियों के मन्त्र

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर् ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ १ ॥

—यजुः० ३।९॥

भावार्थ—

ज्ञानस्वरूप ज्ञान के दाता, परमज्योति परमेश्वर आप ।
आज्ञापालन-हित हवि अर्पित, जगकल्याण हेतु यह नाथ ॥१।

ओ३म् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

—यजुः० ३।९॥

भावार्थ—

ज्ञानरूप विद्या के द्योतक, आत्मज्ञान दाता जगदीश ।
वस्तु वस्तु में ज्योति तुम्हारी, अर्पित भेंट तुम्हें मम ईश ॥ २ ॥

(निम्न मन्त्र का मन में उच्चारण कर आहुति दें)

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर् ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० ३।९॥

भावार्थ—

अग्निस्वरूप प्रकाशक जग के, तुम्हीं ज्योतियों के ज्योती ।
जगहित होम करें प्रभु जिससे, प्राणवायु पावन होती ॥३॥

ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या । जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥

—यजुः० ३।१०॥

प्राण आदि सूर्यादिलोक में,जीवात्मा में व्यापक आप ।
व्याप्त तुम्ही हो अङ्ग-अङ्ग में ,चन्द्रवती रात्री के साथ ।
मोक्ष-प्रदायक अग्निरूप प्रभु, सब पर प्रीती करनेहार ।
हमको आप प्राप्त हो जावें, आहुति देव करो स्वीकार ॥ ४ ॥

प्रातः और सांय-दोनों काल की आहुतियों के एक समान मन्त्र

ओ३म् भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय—इदन्न मम ॥ १ ॥

भावार्थ—

प्राणवायु हो शुद्ध जगत् में, अग्निरूप हे प्राणाधार !
मेरे लिये नहीं प्रभु जगहित, अर्पित हवि कीजै स्वीकार ॥ १ ॥

ओ३म् भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। इदं वायवेऽपानाय— इदन्न मम ॥ २ ॥

भावार्थ—

वायुरूप व्यापक दुःखनाशक, हो अपान बिन रोग-विकार।
मेरे लिये नहीं प्रभु जगहित, अर्पित हवि कीजै स्वीकार ॥ २ ॥

ओ३म् स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय—इदन्न मम ॥ ३ ॥

भावार्थ—

व्यान-वायु हो स्वच्छ, सूर्यसम ! सुख-स्वरूप हे जगदाधार !
मेरे लिये नहीं प्रभु जगहित, अर्पित हवि कीजै स्वीकार ॥ ३ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः— इदन्न मम ॥ ४ ॥

प्राणरूप 'भूः' 'भुवः' दुःख के, नाशक 'स्वः' सुख के दातार !
अग्नि-वायु-आदित्य-नियामक, हे जगकारण सर्वाधार !
प्राण-अपान-व्यान के द्वारा, जीवन-रक्षण-पोषणहार ।
मेरे लिये नहीं प्रभु जगहित, अर्पित हवि कीजै स्वीकार ॥ ४ ।

ओ३म् आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥ ५ ॥

भावार्थ—

कण-कण में व्यापक परमेश्वर,करुणाकर हे ज्योतिस्वरूप !
नित्यानन्द-मोक्ष-सुखदायक, अमृत ब्रह्म हे प्राणस्वरूप !
दुःख-विनाशक सुखस्वरूप तू, रक्षक ओम् पिता करतार ।
आहुति श्रद्धाभाव-समन्वित, प्रभुवर कर लीजै स्वीकार ॥ ५ ॥

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ ६ ॥

—यजुः० ३२ । १४ ॥

भावार्थ—

सब विद्वान् पितर-पालकजन, जो मेधा-धन पाते हैं ।
उसी सुमेधा-धन के इच्छुक, शरण तुम्हारी आते हैं ।
अग्निस्वरूप प्रकाशक ईश्वर ,सत्यवचन यह कर दीजै ।
प्रज्ञा ऋतम्भरा से, धन से, हमको मेधावी कीजै ॥ ६ ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद् भद्रं तन्नऽआसुव स्वाहा ॥ ७ ॥

—यजुः० ३० । ३ ॥

भावार्थ—

दिव्य कर्म गुण और भाव के,प्रेरक-धारक सविता देव ।
कर दो दूर हमारे सारे, जो जो दुर्गुण दुःख कुटेव ।
जग-उत्पादक हे करुणाकर ! इतनी सी करुणा कर दो ।
हममें भद्र-भाव-गुण सारे, धर्म-आचरण सुख भर दो ॥ ६ ॥

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये ऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम ऽउक्तिं विधेम स्वाहा ॥ ८ ॥

—यजुः० ४० । १६ ॥

भावार्थ—

दिव्यस्वरूप प्रकाशक स्वामी, बहुविधि करें नमन तुमको ।
हे सर्वज्ञ दूर कर हमसे, पापाचरण कुटिलपन को ।
ले चल धर्म मार्ग से होवे, धन-ऐश्वर्य सुलभ भारी ।
उत्तम ज्ञान बुद्धि हम पावें, मिटे अविद्या-अंधियारी ॥ ७ ॥

इसके पश्चात् जितनी आहुति देना चाहें उतनी बार 'गायत्री-मन्त्र' बोलकर आहुति देनी चाहिए—

गायत्री-मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा ॥

—यजुः० ३६ । ३ ॥

भावार्थ—

रक्षक पिता ओम् प्रिय पालक, प्राणरूप दुःखनाशनहार ।
तुम सुखरूप जगत्-उत्पादक, सविता देव दया-आधार !
हम तव शुद्ध तेज को धारें,धारण किया हुआ वह तेज ।
धारणवती हमारी मति को, प्रेरे सदा सुपथ पर देव !॥

विशेष सूचना— दैनिक-अग्निहोत्र में इसके पश्चात् पूर्णाहुति मन्त्र को तीन बार बोलकर तीन आहुतियां देते हुये दैनिक-अग्निहोत्र समाप्त कर देना चाहिये ।

कुछ लोग दैनिक यज्ञ में 'स्विष्टकृद्-आहुति' तथा 'प्राजापत्य आहुति' भी देते हैं । दैनिक यज्ञ में ये आहुतियां आवश्यक नहीं । अतः महर्षि दयानन्द ने भी इनका विधान नहीं किया है । यदि कोई देना चाहे तो पूर्णाहुति से पूर्व निर्दिष्ट विधि से दे । विधि इस प्रकार है—

स्विष्टकृद्-आहुति

स्विष्टकृद् आहुति घृत अथवा भात की अथवा हलवा आदि जो भी यज्ञ का पाकद्रव्य हो उसकी देवें—

ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते—इदन्न मम ॥

—आश्व० १।१०।२२॥

भावार्थ—

प्रभु इस यज्ञ-कर्म में हमसे, जो न्यूनाधिक कर्म हुआ।
तुम सर्वज्ञ अल्पज्ञानी हम, ज्ञात तुम्हें सब मर्म हुआ।
हमको प्रभु अल्पज्ञ जानकर, इसे यथोचित तुम लो मान।
सब शुभ इष्ट कामना वाला, पूर्ण यज्ञ करदो भगवान्!
अग्नि रूप परमात्मन् तू ही, यज्ञ सफल सब करता है।
प्रायश्चित्ताहुति द्वारा तू, पूर्ण कामना करता है।
यज्ञ सफल हो पूर्ण कामना, ऐसी कृपा करो करतार।
स्वार्थभाव से रहित भेंट यह, पूर्णकाम! कर लो स्वीकार ॥

प्राजापत्य-आहुति

(इस मन्त्र को मन में पढ़कर मौन आहुति दे)

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये—इदन्न मम ॥

—यजुः० १८।२८॥

मूकभाव से प्रजापते हे, प्रजा पालते निशि दिन आप ।
प्रजा-पुष्टि-हित हव्य समर्पित, पूर्ण भक्ति श्रद्धा के साथ ॥

पूर्णाहुति-मन्त्र

निम्न मन्त्र को तीन बार बोलकर एक-एक करके तीन आहुतियां देवें-

ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥

हे आनन्द-स्वरूप एकरस, तुम हो स्वयं पूर्ण भगवान् ।
कृपा आपकी से होते सब, पूर्ण श्रेष्ठ-उपकारक-काम ।
तुम्हें समर्पित प्रभो ! यज्ञ यह, निश्चय से पूरण कीजै ।
निर्-अभिमान भक्ति से पूरित, उपकारक जीवन दीजै ।

॥ इति दैनिक अग्निहोत्र-विधिः समाप्तः ॥

आवश्यक -सूचना

1. यदि अधिक आहुति देना चाहें तो दैनिक यज्ञ के **'अग्ने नय सुपथा०'** के पश्चात् गायत्री आदि मन्त्रों से आहुतियां देकर फिर पूर्णाहुति करनी चाहिये ।

2. विशेष अवसरों के बृहद् यज्ञ में दैनिक यज्ञ के 'अग्ने नय सुपथा०' के पश्चात् **'सामान्य प्रकरण'** के मन्त्रों से आहुति देकर फिर पूर्णाहुति करनी चाहिए ।

3. पाक्षिक यज्ञ में दैनिक यज्ञ के 'अग्ने नय सुपथा०' के पश्चात् **'पौर्णमासी'** या **'अमावस्या'** के मन्त्रों से आहुति देकर फिर पूर्णाहुति करनी चाहिए ।

सामान्य -प्रकरण के मन्त्र

[साप्ताहिक सत्संग या पाक्षिक आदि विशेष यज्ञों में दैनिक यज्ञ के **'अग्ने नय सुपथा०'** मन्त्र के पश्चात् इस सामान्य प्रकरण के निम्न मन्त्रों से घृत की आहुतियां देनी चाहिए । उसके पश्चात् पूर्णाहुति करे]

अथ सामान्य- प्रकरणम्

व्याहृति-आहुति मन्त्र

(इन मन्त्रों से घृत की आहुतियां दें)

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा । इदमग्नये—इदन्न मम ॥ १ ॥

भावार्थ—

फैले ज्ञान-अग्नि जग-भर में, अग्निरूप-**'भूः'** प्राणाधार ।
तेरा तुझे सौंपते प्रभुवर, इसमें क्या मेरा अधिकार ? ॥ १ ॥

ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा । इदं वायवे—इदन्न मम ॥ २ ॥

भावार्थ—

वायुरूप घट-घट में व्यापक, **'भुवः'** दुःख के नाशनहार ।
तेरा तुझे सौंपते प्रभुवर ! इसमें क्या मेरा अधिकार ॥ २ ॥

ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा । इदमादित्याय—इदन्न मम ॥ ३ ॥

भावार्थ—

हे आदित्य अखण्ड प्रकाशक, सुख-स्वरूप **'स्वः'** जगदाधार ।
तेरा तुझे सौंपते प्रभुवर, इसमें क्या मेरा अधिकार ? ॥ ३ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः— इदन्न मम ॥ ४ ॥

—गोभिल गृ० सू० १ । ३ । ४ ॥

भावार्थ—

प्राणप्रदाता सङ्कट-त्राता, मङ्गलमय सुखदाता हो ।
अग्नि-वायु-आदित्य सभी के, तुम धाता निर्माता हो ।
सकल जगत् के हों हितकारी,अग्नि वायु आदित्य प्रभो !
करते तुझे समर्पित तेरा, क्या मेरा हे नित्य विभो ? ॥ ४ ॥

चार आज्याहुति-मन्त्र

(ये चार आहुतियां घृत की देवें)

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय — इदन्न मम ॥ १ ॥

—ऋग्० ९ । ६६ । १९ ॥

भावार्थ—

प्राणरूप हे सङ्कटत्राता, सुखदायक विभु अग्नि-स्वरूप !
कर दो शुद्ध हमारा जीवन, करो अन्न-बल से भरपूर ।
दुष्ट जन्तुओं दुर्भावों को, हम से दूर हटा देवें ।
शुद्ध स्वरूप पतित-जन-पावन ! हवि अर्पित जगहित लेवें ॥ २ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय — इदन्न मम ॥ २ ॥

—ऋग्० ९ । ६६ । २० ॥

भावार्थ—

प्राणाधार दुःखों के नाशक, तुम सुखरूप प्रकाशक हो ।
ज्ञान-प्रदाता जीवन-पावक, जन-जन के हितकारक हो ।
परम-पुरोहित महा-स्तुत्य तव, करें स्तवन—तुझको हों प्राप्त ।
श्रद्धामय हवि नाथ लीजिए, हे पवमान अग्निमय व्याप्त ! ॥२ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय—इदन्न मम ॥३ ॥

—ऋग्० ९ । ६६ । २१ ॥

भावार्थ—

प्राण-प्रदाता सङ्कट-त्राता,तुम सुखदाता अग्नि-स्वरूप ।
उत्तम-कर्म-अधिष्ठाता हो, श्रेष्ठ कर्म हम करें अनूप !
अद्भुत तेज पराक्रम पावें, विविधैश्वर्य पुष्टि लें धार ।
हे पवमान अग्निमय ईश्वर,श्रद्धामय हवि लो स्वीकार ॥ ३ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा। इदं प्रजापतये—इदन्न मम ॥ ४ ॥ —ऋग्० १० । १२१ । १० ॥

भावार्थ—

नहीं दूसरा तुमसे बढ़कर, प्रजापते सत् चित् आनन्द ।
तुम उत्पन्न चराचर जग के, सर्वोपरि राजा स्वच्छन्द ।
हम उद्यम जिस शुभ इच्छा से, करें— पूर्ण इच्छा कर दो ।
जगहित हवि लो— धनपति हों हम, ऐसा पुरुषारथ भर दो ॥ ४ ॥

अष्टाज्याहुति-मन्त्र

(ये आठ आहुतियां घृत की दें)

ओ३म् त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः।यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां— इदन्न मम ॥ १ ॥

—ऋग्० ४।१।४॥

भावार्थ—

ज्ञानस्वरूप अग्निमय वाहक,कर्म-शुभाशुभ के ज्ञाता।
याजकश्रेष्ठ परमतेजस्वी, तुम प्रकाशमय जगत्राता।
विद्वानों के प्रेमपात्र हों, क्रोध न उनका हम पर हो।
द्वेषभाव सब दूर कीजिए, हवि अर्पित यह प्रभु तुम को ॥ १ ॥

ओ३म् स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां— इदन्न मम ॥ २ ॥

—ऋग्० ४।१।५॥

भावार्थ—

प्रतिपल रक्षक अग्निरूप प्रभु, रक्षा करो निकट से नाथ!
ज्योतिपूर्ण इस उषाकाल में, शुभकर्मों में हो तव साथ।
विद्वानों का सङ्ग मिले जो, करें ज्ञान का सुखद प्रकाश।
प्रभो पुकारें अर्पित हवि लो,दो सब सुख, हर सब सन्ताप ॥ २ ॥

ओ३म् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय। त्वामवस्युरा चके स्वाहा। इदं वरुणाय– इदन्न मम ॥ ३ ॥

—ऋग्० १।२५।१९॥

भावार्थ–

मैं भवताप-प्रताडित सुनिए, वरुणदेव मेरी स्तुति को ।
करते आप कृपा सब जग पर,कर तत्काल सुखी मुझको ।
रक्षा सदा आपसे चाहूँ, दो विद्या-विज्ञान मुझे ।
हे वरणीय वरुण जगहित हूँ, करता हव्य प्रदान तुझे ॥ ३ ॥

ओ३म् तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा । इदं वरुणाय– इदन्न मम ॥ ४ ॥

— ऋग्० १।२४।११॥

शुभकर्मों से सत्यवचन से, वन्दन कर तुझको ध्यावें ।
याजक जिसे यज्ञ से पाते, पूर्ण आयु वह हम पावें ।
मत ठुकराना विनय हमारी, शुभकर्मों का ज्ञान भरो ।
हवि अर्पित स्वीकार वरुण हो,आयु मध्य में नष्ट न हो ॥ ४ ॥

ओ३म् ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः—इदन्न मम ॥ ५ ॥

—कात्यायन श्रौत० २५।१।११॥

भावार्थ—

सविता वरुण विष्णु जगव्यापक, अर्चित दिव्यगुणी विद्वान् !
जो यज्ञादिकर्म में फैला, बाधाओं का विकट-वितान ।
आप सभी उन सौ हजार सब, बाधाओं को कीजै दूर ।
सबके लिए लोकहित में यह, हवि-अर्पित श्रद्धा-भरपूर ॥ ५ ॥

ओ३म् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयाऽअसि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजं स्वाहा । इदमग्नये अयसे— इदन्न मम ॥ ६ ॥

—कात्यायन श्रौत० २५ । १ । ११ ।

भावार्थ—

अग्निस्वरूप प्रकाशक व्यापक, सत्यस्वरूप सहायक आप ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह से, तुम ही नाथ बचाते आप ।
रोग-निवारक ओषध, बल दो, प्रभु यह यज्ञ सफल कर दो ।
स्वार्थभाव से रहित जगत्-हित,हवि अर्पित स्वीकृत कर लो ॥ ६ ॥

ओ३म् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा । इदं वरुणायाऽऽदित्यायादितये च—इदन्न मम ॥ ७ ॥

—ऋग्० १ । २४ । १५ ॥

हे अविनाश बन्ध के नाशी, वरुण देव ! तेरा वन्दन ।
हरो हमारे भवभय के सब, दृढ़-दृढ़तर-दृढ़तम बन्धन ।
नित्यानन्द मोक्ष सुख पावें, हम निष्पाप व्रती बनकर ।
जगहित हवि स्वीकार कीजिए,करो कृपा इतनी हम पर ॥ ७ ॥

ओ३म् भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञं हिंसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा । इदं जातवेदोभ्यां—इदन्न मम ॥ ७ ॥

—यजुः० ५ । ३ ॥

भावार्थ—

मध्य हमारे हों नर-नारी, मननशील ज्ञानी निष्पाप ।
यज्ञ-सुपालक, और यज्ञ की, रक्षा करें स्वयं वे नाथ !
शुभकर्मों में बनें हितैषी, जातवेद = वैदिक विद्वान् ।
हव्य समर्पित देव तुम्हीं को,करो हमारा अब कल्याण ॥ ८ ॥

स्विष्टकृद्-आहुति

स्विष्टकृद् आहुति घृत अथवा भात की, अथवा हलवा आदि जो भी यज्ञ का पाकद्रव्य हो उसकी देवें—

ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते—इदन्न मम ॥

—आश्व० १ ।१० ।२२ ॥

भावार्थ—

प्रभु इस यज्ञ-कर्म में हमसे, जो न्यूनाधिक कर्म हुआ ।
तुम सर्वज्ञ अल्पज्ञानी हम, ज्ञात तुम्हें सब मर्म हुआ ।
हमको प्रभु अल्पज्ञ जानकर, इसे यथोचित तुम लो मान ।
सब शुभ इष्ट कामना वाला, यज्ञ पूर्ण कर दो भगवान् !

अग्निरूप परमात्मन् तू ही, यज्ञ सफल सब करता है ।
प्रायश्चित्ताहुति द्वारा तू, पूर्ण कामना करता है ।
यज्ञ सफल हो, पूर्ण कामना, करो कृपा ऐसी करतार ।
स्वार्थभाव से रहित भेंट यह, पूर्णकाम कर लो स्वीकार ॥

प्राजापत्य-आहुति

(इस मन्त्र को मन में पढ़कर मौन आहुति दें)

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये-इदन्न मम ॥

—यजुः० १८।२८॥

भावार्थ—

मूकभाव से प्रजापते हे, प्रजा पालते निशि दिन आप ।
प्रजापुष्टि-हित हव्य समर्पित, पूर्ण भक्ति श्रद्धा के साथ ॥

॥ इति सामान्य प्रकरणम् ॥

पूर्णाहुति-मन्त्र

ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ।

(इस मन्त्र को तीन बार बोलकर एक-एक करके तीन आहुतियां देवें)

भावार्थ—

हे आनन्द-स्वरूप एकरस ! तुम हो स्वयं पूर्ण भगवान् ।
कृपा आपकी से होते सब, पूर्ण श्रेष्ठ उपकारक काम ।
तुम्हें समर्पित प्रभो यज्ञ यह, निश्चय से पूरण कीजै ।
निर्-अभिमान भक्ति से प्रेरित, उपकारक जीवन दीजै ॥

॥ इति अग्निहोत्र विधिः समाप्तः ॥

* * * * * *

अधिक आहुतियों के लिए वेद-मन्त्र-संकलन

यदि अधिक आहुतियाँ देना चाहें तो दैनिक यज्ञ के **'अग्ने नय सुपथा०'** मन्त्र के पश्चात् **गायत्री मन्त्र** अथवा अन्य वेदमन्त्रों से आहुतियाँ देनी चाहिए। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अधिक आहुतियों के लिए **केवल गायत्री मन्त्र से आहुति देने का विधान किया है।** फिर भी कुछ मन्त्र नीचे संकलित किये जा रहे हैं—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा ॥ १ ॥ यजुः० ३६। ३ ॥

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतम् अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् स्वाहा ॥ २ ॥

—यजुः० ३६। २४ ॥

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० १६। ४१ ॥

ओ३म् भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवां सस्तनूभिर् व्यशेमहि देवहितं यदायुः स्वाहा ॥ ४ ॥

—यजुः० २५। २१ ॥

भावार्थः— कृपया १ से ४ मन्त्रों के भावार्थ क्रमशः पृष्ठ संख्या १(२०) (५३), ११ (३९), १३ तथा २७ पर देखें।

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे, सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् स्वाहा ॥ ५ ॥

—ऋग० ७। ५९। १२ ॥

जगदम्बे ! तव यजन करें हम, बरसाओ निज रस-वत्सल।
अ उ म् इन तीन शक्तियों, से पूरित तेरा आँचल।

पुष्टि सुवर्धक पक्व सुगन्धित, खरबूजे के तुल्य, प्रभो !
पूर्ण आयु हो देह तजें हम, पर न तजें तव आँचल को ॥

ओ३म् स्तुता मया वरदा वेद माता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्। आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकं स्वाहा ॥ ६ ॥—अथर्व. १९ । ७१ । १ ॥

प्रभु ! तव वाणी सुखदा वरदा, वेद-रूप माता पवमान।
जिसका पठन-मनन-चिन्तन नित, प्रेरे सुपथ—करे कल्याण।
स्वस्थ प्राण वाला दीर्घायुष, ब्रह्मतेज, उत्तम सन्तान—
यश, सम्पत्, पशु-धन प्रदान कर, प्रभो ! मोक्षपद दो वरदान ॥

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते स्वाहा ॥ ७ ॥ —ब्राह्मण ग्रन्थ

तुम हो पूर्ण स्वयं परमेश्वर, पूर्ण सृष्टि यह, मानव-देह।
होती पूर्ण पूर्ण की रचना, पूर्ण आपका सबसे नेह।
भरते पूर्ण भक्त की झोली, पूर्ण शेष तेरे भण्डार।
सब विधि पूर्ण यज्ञ यह कीजै, पूर्ण कामना करुणागार ! ॥

ओ३म् वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा ॥ ८ ॥ —यजु० १ । ३ ॥

जो असंख्य ब्रह्माण्ड-पटल का, धारक शोधक श्रेष्ठ पुनीत।
उसी यज्ञ को स्वयंप्रकाशक, वसुपति सविता करें पुनीत।
प्रभुवर !यज्ञ व वेदज्ञान से, हों पवित्र पावें सुखधाम।
कृपा आपकी से भगवन् हो, प्रणिमात्र का नित कल्याण ॥

॥ इति मन्त्र-संकलनम् ॥

पाक्षिक-यज्ञ की विधि

[पौर्णमासी अथवा अमावास्या के दिन दैनिक यज्ञ के **'अग्ने नय सुपथा०'** मंत्र के पश्चात् निम्न मन्त्रों से आहुतियां दें, उसके पश्चात् पुर्णाहुति करें ।]

पौर्णमासी की विशेष आहुतियां

(**'अग्ने नय सुपथा०'** मन्त्र के पश्चात् यज्ञ की अग्नि में खीर, हलवा आदि मिष्टपाक की निम्न तीन आहुतियां देवें ।)

ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥ १ ॥
ओ३म् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ॥ २ ॥
ओ३म् विष्णवे स्वाहा ॥ ३ ॥

इसके पश्चात् निम्न व्याहृति-आहुति मन्त्रों से घृत की चार आहुतियां दें—

व्याहृति आहुति-मन्त्र

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदं न मम ॥ १ ॥

ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदं न मम ॥ २ ॥

ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय—इदं न मम ॥ ३ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः — इदं न मम ॥ ४ ॥

अमावास्या की विशेष आहुतियां

('अग्ने नय सुपथा०' मन्त्र के पश्चात् यज्ञ की अग्नि में खीर, हलवा आदि मिष्टपाक की निम्न तीन आहुतियां देवें।)

ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥ १ ॥
ओ३म् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा ॥ २ ॥
ओ३म् विष्णवे स्वाहा ॥ ३ ॥

इसके पश्चात् निम्न व्याहृति-आहुति मन्त्रों से घृत की चार आहुतियां दें।

व्याहृति आहुति मन्त्र

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये— इदं न मम ॥ १ ॥

ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे— इदं न मम ॥ २ ॥

ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय— इदं न मम ॥ ३ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः— इदं न मम ॥ ४ ॥

॥ इति पाक्षिक यज्ञ-विधिः ॥

ओ३म् तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।
वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।
बलमसि बलं मयि धेहि।
ओजोऽस्योजो मयि धेहि।
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि।
सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥

बलिवैश्वदेव यज्ञ विधि

चुल्हे की अग्नि में घी-शक्कर अथवा मीठे भात आदि शाकल्य की आहुतियां निम्न मन्त्रों से दें। **यज्ञकुण्ड में इन आहुतियों को कदापि नहीं देना चाहिए।**

ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥ १ ॥
ओ३म् सोमाय स्वाहा ॥ २ ॥
ओ३म् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ॥ ३ ॥
ओ३म् विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥ ४ ॥
ओ३म् धन्वन्तरये स्वाहा ॥ ५ ॥
ओ३म् कुह्वै स्वाहा ॥ ६ ॥
ओ३म् अनुमत्यै स्वाहा ॥ ७ ॥
ओ३म् प्रजापतये स्वाहा ॥ ८ ॥
ओ३म् द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥ ९ ॥
ओ३म् स्विष्टकृते स्वाहा ॥ १० ॥

॥ इति बलिवैश्वदेव यज्ञ-विधिः ॥

ओ३म् तनूपाऽग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।
आयुर्दाऽग्नेऽस्यायुर्मे देहि।
वर्च्चोदाऽग्नेऽसि वर्चो मे देहि।
अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्मऽआपृण ॥

यज्ञरूप प्रभो हमारे

यज्ञरूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल कपट को मानसिक बल दीजिए ॥१ ॥

वेद की बोलें ऋचाएं सत्य को धारण करें,
हर्ष में हो मग्न सारे शोक सागर से तरें ॥२ ॥

अश्वमेधादिक रचाएं यज्ञ पर-उपकार को ।
धर्म मर्यादा चलाकर लाभ दें संसार को ॥३ ॥

नित्य श्रद्धा भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें ।
रोग पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें ॥४ ॥

भावना मिट जाए मन से पाप अत्याचार की ।
कामनाएं पूर्ण होवें यज्ञ से नर नार की ॥५ ॥

लाभकारी हो हवन हर जीवधारी के लिए।
वायु, जल सर्वत्र हो शुभ गन्ध को धारण किए ॥६ ॥

स्वार्थ भाव मिटे हमारा प्रेम पथ विस्तार हो ।
इदन्न मम का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो ॥७ ॥

हाथ जोड़ झुकाए मस्तक वन्दना हम कर रहे ।
'नाथ' ! करुणा-रूप ! करुणा, आपकी सब पर रहे ॥८ ॥

* * * * *

द्विज वेद पढ़ें सुविचार बढ़ें, बल पाय चढ़ें नित ऊपर को ।
अविरुद्ध रहें ऋजु पन्थ गहें, परिवार कहें वसुधा भर को ॥
ध्रुव धर्म धरें, पर दुःख हरें, तनु त्याग तरें भवसागर को ।
दिन फेर पिता, वरदे सविता, हम आर्य करें जगती भर को ॥

मंगल कामना

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग्भवेत् ॥

सबका भला करो भगवान्, सब पर दया करो भगवान् ।
सब पर कृपा करो भगवान्, सबका सब विधि हो कल्याण ॥

हे ईश ! सब सुखी हों, कोई न हो दुखारी ।
सब हों नीरोग भगवन्, धन-धान्य के भण्डारी ॥
सब भद्रभाव देखें, सन्मार्ग के पथिक हों ।
दुखिया न कोई होवे, सृष्टि में प्राणधारी ॥

आज मिल सब गीत गाओ

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु के धन्यवाद ।
जिसका यश नित गाते हैं, गन्धर्व गुणिजन धन्यवाद ॥१ ॥

मन्दिरों में कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर ।
देते हैं लगातार सौ-सौ बार, मुनिवर धन्यवाद ॥२ ॥

करते हैं जंगल में—मंगल, पक्षिगण हर शाख पर ।
पाते हैं आनन्द, मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ॥३ ॥

कूप में, तालाब में, सिन्धु की गहरी धार में ।
प्रेम-रस में, तृप्त हो करतें हैं जलचर धन्यवाद ॥४ ॥

शादियों में कीर्तनों में, यज्ञ और उत्सव के आदि ।
मीठे स्वर में चाहिए, करें नारी-नर सब धन्यवाद ॥५ ॥

गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर की स्तुति ।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर-धर धन्यवाद ॥६ ॥

सुखी बसे संसार सब

सुखी बसे संसार सब, दुखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सबकी, भगवन् ! पूरी होय ॥१ ॥

विद्या, बुद्धि, तेज़, बल सब के भीतर होय।
दूध-पूत धन-धान्य से वंचित रहे न कोय ॥२ ॥

आपकी भक्ति-प्रेम से, मन होवे भरपूर।
रांग-द्वेष से चित्त मेरा, कोसों भागे दूर ॥३ ।

मिले भरोसा नाम का, हमें सदा जगदीश।
आशा तेरे धाम की, बनी रहे मम ईश ॥४ ॥

हमें बचाओ पाप से, करके दया दयाल।
अपना भक्त बनायकर, सबको करो निहाल ॥५ ॥

दिल में दया उदारता, मन में प्रेम अपार।
हृदय में धैर्य वीरता, सबको दो करतार ॥६ ॥

नारायण तुम आप हो, पाप-विमोचनहार।
क्षमा करो अपराध सब, कर दो भव से पार ॥७ ॥

हाथ जोड़ विनती करूँ, सुनिये कृपानिधान।
साधु-संगत सुख दीजिये, दया नम्रता दान ॥८ ॥

ओ३म् जय जगदीश हरे

ओ३म् जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।
भक्तजनों के संकट, क्षण में दूर करे ॥ ओ३म् जय जगदीश हरे ॥

जो ध्यावे फल पावे, दुख विनशे मन का ।
सुख सम्पत्ति घर आवे, कष्ट मिटे तन का ॥ ओ३म् जय.... ॥१ ॥

मात-पिता तुम मेरे, शरण पड़ूं मैं किसकी ?
तुम बिन और न दूजा, आस करूं मैं जिसकी ॥ ओ३म् जय.... ॥२ ॥

तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी ।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी ॥ ओ३म् जय.... ॥३ ॥

तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्त्ता ।
मैं सेवक तुम स्वामी, कृपा करो भर्ता ॥ ओ३म् जय.... ॥४ ॥

तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति ।
किस विध मिलूं दयामय, तुमको मैं कुमति ॥ ओ३म् जय.... ॥५ ॥

दीनबन्धु दुख हर्त्ता, तुम रक्षक मेरे ।
करुणा हस्त बढ़ाओ, शरण पड़ा मैं तेरे ॥ ओ३म् जय.... ॥६ ॥

विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा ।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा ॥ ओ३म् जय.... ॥७ ॥

वेद का राष्ट्र-गीत

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धीर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्। निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥

—यजु० २२।२२॥

ब्रह्मन्! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्मतेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरि-दल-विनाशकारी॥
होवें दुधारु गौवें, वृष अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही॥
बलवान् सभ्य योद्धा, यजमान-पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें॥
फल-फूल से लदी हों, ओषध अमोघ सारी।
हों योग-क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥

शान्ति पाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्वं शान्तिः। शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि॥

ओ३म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

पितृयज्ञ-विधि

दैनिक कर्मों में तीसरा यज्ञ है— पितृयज्ञ। पितृयज्ञ में पितृ शब्द मूल= यौगिक अर्थ द्वारा 'रक्षक' का वाचक है। इसलिए पितृयज्ञ में जहां प्रपितामह (परदादा), प्रपितामही (परदादी), पितामह (दादा), पितामही (दादी) पिता, माता, बड़े भाई, भोजाई, अन्य ज्येष्ठ सम्बन्धी- सगोत्र आदि का आदर-सत्कार, अन्न-पान, वस्त्रादि से उनकी सेवा शुश्रूषा का विधान है, वहां उन विशिष्ट विद्वानों की सेवा-शुश्रुषा का भी विधान है, जिनसे गृहस्थों को धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की शिक्षा प्राप्त होती है।

अतिथियज्ञ-विधि

'अतिथि' उसको कहते हैं— जो विद्वान् उपदेशक मानव-जाति के सेवक भ्रमण करते हुए आश्रय के लिए अचानक गृहस्थ के द्वार पर उपस्थित हो जाते हैं। ऐसे महापुरुषों की सेवा-शुश्रूषा, अन्नपान आदि से पूजा करना 'अतिथि-यज्ञ' कहलाता है।

अतिथि यज्ञ की महिमा अथर्ववेद (काण्ड १५, सूक्त १०-१४) में बड़े विस्तार से लिखी है। अतिथियों को आश्रय न देनेवाले गृहस्थी को महापातकी कहा गया है। रात्रि के समय प्राप्त हुए अतिथि को विशेष रूप से आश्रय देने का विधान है। इसी परम्परा के कारण भारतीय अभ्यागत-पुरुष की आतिथ्य-सेवा में सदा से प्रसिद्ध रहे हैं।

॥ इति पितृयज्ञ-अतिथियज्ञ-विधिः ॥

गीत-भजन-संग्रह

प्रभु तुम अणु से सूक्ष्म हो प्रभु तुम गगन से विशाल हो

प्रभु तुम अंणु से सूक्ष्म हो, प्रभु तुम गगन से विशाल हो ।
मैं मिसाल दूं तुम्हें कौन-सी, दुनिया में तुम बेमिसाल हो ॥
हर दिल में तेरा धाम है, और न्याय ही तेरा काम है ।
सब से बड़ा तेरा नाम है, जगनाथ हो जगपाल हो ॥ १ ॥
तुम साधकों की हो साधना, या उपासकों की उपासना ।
किसी भक्त की मृदु भावना, या किसी कवि का खयाल हो ॥ २ ॥
मिले सूर्य को तेरी रोशनी, मिले चाँद को तेरी चाँदनी ।
सब पर दया तेरी पावनी, प्रभु तुम तो दीन दयाल हो ॥ ३ ॥
तुझ पर किसी का न जोर है, तेरा राज्य ही सब ओर है ।
तेरे हाथ सबकी ही डोर है, तुम्हीं जिन्दगी, तुम्हीं काल हो ॥ ४ ॥
जो खतम न हो वह किताब हो, बेशुमार हो, बेहिसाब हो ।
जिस का कहीं न जवाब हो, उलझा हुआ वह सवाल हो ॥ ५ ॥
कोई नर तुझे न रिझा सका, तेरा पार कोई न पा सका ।
न 'पथिक' वह गीत ही गा सका, जिसमें तेरा सुरताल हो ॥ ६ ॥

— पं० सत्यपाल पथिक

हे प्रभु हम तुमसे वर पावें

हे प्रभु हम तुमसे वर पावें, सकल विश्व को आर्य बनावें ।
फैलें सुख-सम्पति फैलावें, आप बढ़ें प्रिय राष्ट्र बढ़ावें ।
वैर विघ्न को मार मिटावें, प्रीति नीति की रीति चलावें ॥

विश्वपति जगदीश तुम, तेरा ही ओम् नाम है

विश्वपति जगदीश तुम, तेरा ही ओम् नाम है।
मस्तक झुका के प्रेम से, ईश्वर तुम्हें प्रणाम है ॥

सृष्टि बना के पालना, दाता तेरे ही हाथ में।
करना प्रलय भी अन्त में, तेरा ही नाथ काम है।
विश्वपति जगदीश तुम .... ॥ १ ॥

आता नज़र नहीं मगर, कण-२ में तू समा रहा।
जग में जहाँ पे तू न हो, ऐसा न कोई धाम है।
विश्वपति जगदीश तुम .... ॥ २ ॥

ऋतुएँ बदल के आ रही, नदियाँ ये सिन्धु में जा रही।
शाम के बाद है सुबह, सुबह के बाद शाम है।
विश्वपति जगदीश तुम .... ॥ ३

सूरज समय पे ढल रहा, वायु नियम से चल रहा।
झूकता है सर यह देखकर, तेरा जो इंतजाम है।
विश्वपति जगदीश तुम .... ॥ ४ ॥

होता है न्याय ही सदा, ईश्वर तेरे दरबार में।
चलती नहीं सिफारिशें, चढ़ता न कोई दाम है।
विश्वपति जगदीश तुम .... ॥ ५ ॥

तेरे पदार्थ हैं प्रभु, 'पथिक' सभी के वास्ते।
सबके लिए हैं वेद भी, जिसमें तेरा ही भान है।
विश्वपति जगदीश तुम .... ॥ ६ ॥

— पं० सत्यपाल पथिक

ओं नाम के हीरे मोती

ओं नाम के हीरे मोती, मैं बिखराऊं गली-गली ।
लूटले जो कोई लूटना चाहे, शोर मचाऊं गली-गली ॥

माया के दीवानो सुन लो, इक दिन ऐसा आयेगा ।
धन दौलत और रूप खजाना, धरा यहीं रह जायेगा ॥
सुन्दर काया माटी होगी, चर्चा होगी गली-गली ॥१ ॥

मित्र प्यारे सगे सम्बन्धी, इक दिन तुझे भुलायेंगे ।
कल जो कहते अपना-अपना, आग में तुझे जलायेंगे ।
दो दिन का यह चमन खिला है, फिर मुरझाये कली-कली ॥२ ॥

क्यों करता है मेरी-मेरी, तज दे इस अभिमान को ।
छोड़ जगत् के झूठे धन्धे, जप ले प्रभु के नाम को ।
गया समय फिर हाथ न आये, तब पछताये घड़ी-घड़ी ॥३ ॥

जिसको अपना कह-कह करके, मूरख तू इतराता है ।
छोड़ के बन्दे साथ विपद् में, कभी न कोई जाता है ।
दो दिन का यह रैन बसैरा, आखिर होगी चला-चली ॥४ ॥

ओम् जपो मेरे भाई, ओम् जपो मेरी बहना

ओम् जपो मेरे भाई, ओम् जपो मेरी बहना ।
अन्त समय तक इस वाणी से, ओम्-ओम् ही कहना ॥

ओम् जपे से मन के कल्मष धुल जाते,
ओम् जपे से सारे बन्धन खुल जाते ।
ओम् ही सबका मुकुट मणि है—ओम् ही सबका गहना ॥१ ॥

ओम् नाम का सिमरण सुख पहुंचाता है,
ओम् नाम का चिंतन मन हरषाता है ।
अमृत के सागर में प्रेमी, मस्त मगन ही रहना ॥२ ॥

कभी-कभी जीवन में सुख भी मिलता है ।
सुख छिन जाता है तो, दुःख भी मिलता है ।
ईश्वर का वरदान समझ के, खुशी-खुशी सब सहना ॥३ ॥

ओम् की राह में जीवन अर्पण हो जावे,
बिन सोचे सर्वस्व समर्पण हो जावे ।
जिस रंग में परमेश्वर राखे, उसी रंग में रहना ॥४ ॥

तू है सच्चा पिता

तू है सच्चा पिता, सारे संसार का, ओम् प्यारा ।
तूही तूही है रक्षक हमारा ॥ तू है सच्चा पिता............... ॥१ ॥

चांद सूरज सितारे बनाये, पृथ्वी आकाश पर्वत सजाये ।
अंत पाया नहीं, तेरा पाया नहीं, पारवारा ।
तूही तूही है रक्षक हमारा ॥ तू है सच्चा पिता............... ॥२ ॥

पक्षिगण राग सुन्दर हैं गाते, जीव जन्तू भी सिर हैं झुकाते,
उसको ही सुख मिला, तेरी राह पर चला, जो भी प्यारा ।
तूही तूही है रक्षक हमारा ॥ तू है सच्चा पिता............... ॥३ ॥

पाप पाखण्ड हमसे छुड़ाओ, वेद मार्ग पर हम को चलाओ,
लगे भक्ति में मन, करें संध्या हवन, जग यह सारा ।
तूही तूही है रक्षक हमारा ॥ तू है सच्चा पिता............... ॥४ ॥

अपनी भक्ति में मन को लगाना, कष्ट 'नंदलाल' सब के मिटाना ।
दुखियों कंगालों का, और धनवालों का, तू सहारा ।
तूही तूही है रक्षक हमारा ॥ तू है सच्चा पिता............... ॥५ ॥

उच्च स्वर से विजय गान गाना

ओ३म् ध्वज हाथ ले, तू विजय साथ ले पग बढ़ाना ।

उच्च स्वर से विजय गान गाना ॥

रोक सकते नहीं मार्ग तेरा, गर्मी सर्दी व भीषण अंधेरा ।

दिन हो या रात हो, आंधी बरसात हो-लक्ष्य पाना ।

उच्च स्वर से विजय गान गाना........... ॥१ ॥

विकट संकट न बाधा बनेगें, पर्वतों के शिखर भी झुकेंगें

मन उमंग भरा, मन तरंग भरा, गा तराना ।

उच्च स्वर से विजय गान गाना........... ॥२ ॥

भीष्म राणा प्रतापी शिवा से, शत्रुहित रुद्र हैं वीरता से ।

साध लें कार्य या, देह को पात लें, आज ठाना ।

उच्च स्वर से विजय गान गाना........... ॥३ ॥

विष दयानन्द सा पी गरल तू, कर सुधा प्राणप्रद फिर उगल तू ।

वेद को मान कर, राह पहचानकर पग उठाना ।

उच्च स्वर से विजय गान गाना........... ॥४ ॥

आर्य सन्तान ! जागो जगाओ, रक्त दे भारती को सजाओ ।

शत्रु संहार कर, भीरुता त्याग कर, वीर जाना ।

उच्च स्वर से विजय गान गाना........... ॥५ ॥

—आचार्य (डा०) नरेश कुमार

प्रभू का कर भजन प्यारे

प्रभू का कर भजन प्यारे बुराई छूट जायेगी,
हृदय में साधना की साध ज्योति जाग जायेगी।

न पुंजी पुण्य कर्मों की स्वजीवन में इकट्ठी की,
तो अन्तिम काल पश्चात्ताप की ज्वाला जलायेगी।

मिलेगा मार्ग मुक्ति का मिटेगा मोह जगती का,
अगर भक्ति भरी वाणी प्रभु का गीत गायेगी।

कुचिन्तन से हटा मन को सुचिन्तन में लगा मन को,
विचारों की सुपावनता तुझे ऊँचा उठायेगी।

अगर एकाग्रमन अध्यात्म का अभ्यस्त बन जावे,
तेरी अन्तः करण गंगा विजय धारा बहायेगी।

अगर पतवार श्रद्धा का सहारा छोड़ बैठोगे,
तो भव सागर में पगले 'पाल' नइया डूब जायेगी।

प्रभु संग प्रीति लगाए चला जा

प्रभ संग प्रीति लगाए चला जा। उसे इष्ट अपना बनाए चला जा॥
पड़ी है जो सूनी तेरे दिल की बस्ती। प्रभु प्रेम से तू बसाए चला जा॥
अंधेरी हुई जो तेरे मन की नगरी। प्रभु ज्योति से जगमगाए चला जा॥
वही दीन-दुःखियों का हरदम सहाई। उसे तू भी दुःखड़ा सुनाए चला जा॥
तू खुश रह उसी में जो उसकी रजा हो। मुसीबत में भी मुस्कराए चला जा॥
लगा नेक कामों में अपना तू जीवन। तू बन नेक, नेकी कमाए चला जा॥
लगा रह प्रभु भक्ति में ही तू निश-दिन। प्रभू गोद में सुख तू पाए चला जा॥

जब प्यार प्रभु का पा न सका

दुनियां के प्यार में क्या रस है,
जब प्यार प्रभु का पा न सका ।
यह जन्म तभी तक बन्धन है,
जब तक दुःख में भी गा न सका ॥

है भक्ति तभी प्रभु चरणों में,
विश्वास अटल जब जम जाए ।
क्या भक्त है वह, तूफानों को—
आभार न उसका मान सका ॥ १ ॥

है पूजा यही जो कुछ भी है,
भगवान् के अर्पण कर देना ।
वह पूजा नहीं आडम्बर है,
मन में जो हिलोरें ला न सका ॥ २ ॥

इस जन्म का संचित कर्म सदा,
पर जन्म की पूंजी बनता है
उस जनम में जीव क्या लाएगा,
इस जन्म में जो वह कमा न सका ॥ ३ ॥

हे "सत्य" ईश तू बना ले सखा,
दुनियां न मुझे दुत्कार सके ।
जग अपना बना कर क्या होगा,
गर तुझको ही अपना बना न सका ॥ ४ ॥

दया कर दान भक्ति का

दया कर दान भक्ति का हमें परमात्मा देना
दया करना हमारी आत्मा में शुद्धता देना।
सदा से आप दीनों का प्रभु उद्धार करते हैं,
हमें भी दीन हालत से पतित पावन उठा देना।
हमारे ध्यान में आओ प्रभो आंखों में बस जाओ,
अंधेरे मन के अन्दर ही परम ज्योति जगा देना।
बहा दो प्रेम की गंगा दिलों में प्रेम का सागर,
हमें मिलजुल के आपस में प्रभो रहना सिखा देना।
हमारा धर्म हो सेवा, हमारा कर्म हो सेवा,
सदा आदर्श हो सेवा प्रभो सेवक बना देना।

वह शक्ति हमें दो दयानिधे

वह शक्ति हमें दो दयानिधे कर्त्तव्य मार्ग पर डट जाएं,
पर-सेवा पर-उपकार में हम यह जीवन सफल बना जाएं।
हम दीन दुःखी निबलों विकलों के सेवक बन सन्ताप हरें,
जो हैं अटके भूले भटके उनको तारें हम तर जाएं।
छल, दम्भ, द्वेष, पाखण्ड, झूठ, अन्याय से निशदिन दूर रहें,
जीवन हो शुद्ध सरल अपना शुचि प्रेमसुधा रस बरसाएं।
निज आन-मान-मर्यादा का प्रभू ध्यान रहे अभिमान रहे,
जिस देश जाति में जन्म लिया बलिदान उसी पर हो जाएं।

धीरे-धीरे घटती जाए

धीरे-धीरे घटती जाये सारी रे उमरिया ।
दुनिया के मेले में लुट गई जीवन की गठरिया ॥
साथी नहीं किसी का कोई, झूठे सपने प्यार के ।
माया के सब तोड़ के बंधन, हो जा भव से पार रे ।
चलता चलता जा पहुंचेगा, प्रीतम की नगरिया ॥ धीरे ____
झूठे गर्व में मदमाता है मिट्टी में मिल जाएगा ।
हीरा जन्म अमोलक तेरा, फिर पीछे, पछताएगा ।
पल-पल जीवन बीता जाए, कल की क्या खबरिया ॥ धीरे ____
ढूंढ रहा है जिसके प्यारे, भीतर है भगवान रे ।
मुक्ति तेरे द्वार खड़ी है, क्यों भूला नादान रे ।
पग-पग पगला ढूंढ रहा है, पाई ना डगरिया ॥ धीरे ____

ओम् बोल मेरी रसना घड़ी-घड़ी

ओम् बोल मेरी रसना घड़ी-घड़ी ॥
सकल काम तज, ओम् नाम भज ।मुखमण्डल में पड़ी-पड़ी ॥ ओम् बोल
ओम् नाम सर्वोपरि प्रभु का । कहे वेद की कड़ी-कड़ी ॥ ओम् बोल
पूरण ब्रह्म करेंगे पूरण । सब आशाएं बड़ी-बड़ी ॥ ओम् बोल
पल-पल पर ले जाना चाहती । मौत सिरहाने खड़ी-खड़ी ॥ ओम् बोल

अहसान कैसे भूलें, ऋषि दयानन्द का

अहसान कैसे भूलें, ऋषि दयानन्द का।
उस योगी का तपस्वी का, आनन्द कंद का॥

जीवन का दान दे गया, अमृत पिला गया।
मल्लाह बन को डूबती नैय्या तरा गया।
सन्देश उसका काम देता, है कमन्द का॥
उस योगी का तपस्वी का________ ॥ १ ॥

रोता था उजड़े देश की हालत को देख कर।
विधवा अनाथ लोगों की दुर्गत को देख कर।
क्या-क्या सुनाऊं हाल दिले दर्द मन्द का।
उस योगी का तपस्वी का________ ॥ २ ॥

आया था वह मैदान में इक शोर-सा उठा।
विरोधी पाखंडियों का इक जोर-सा उठा।
पाँव न डगमगाया उस हिम्मत बुलन्द का॥
उस योगी का तपंस्वी का________ ॥ ३ ॥

उसके हर इक शब्द में थी आग-सी भरी।
हर एक को सुनाता था सच्ची खरी-खरी।
डरता था दिल कभी न उस न्याय पसन्द का॥
उस योगी का तपस्वी का ________ ॥ ४ ॥

था बढ़ता केवल हाथ में तलवार भी नहीं।
दुश्मन था जमाना सारा मददगार भी नहीं।
देख अजब करिश्मा उस लंगोट बन्द का॥ उस योगी __ ॥ ५ ॥

तूने मुझे सब कुछ दिया

तूने मुझे सब कुछ दिया, मैंने धन्यवाद भी ना किया।
तेरी कृपा का पात्र बनने का सु-अवसर खो दिया॥

तूने बनाया सूर्य मेरे, पथ-प्रदर्शन के लिए।
अभिमान-स्वारथ ने मेरे, नयनों को अन्धा कर दिया॥

तूने बनाया वायु मेरी, प्राण रक्षा के लिए।
मैंने राग-द्वेष के दीप से, उसको भी दूषित कर दिया॥

तूने बनाकर देवता, हर अंग पर बिठला दिए।
कहना न मैंने मानकर, सर्वस्व अपना खो दिया॥

अब तो मेरी करनी पै करुणा, कर दो ऐ जननी मेरी।
देवों के दुर्-उपयोग का, मैंने बहुत फल पा लिया॥

सुख सम्पदा ले क्या करूं

सुख सम्पंदा ले क्या करूं, तेरे चरण पाया न जो।
मैं स्वर्ग में रह क्या करूं, तेरी शरण आया न जो॥

क्या लाभ है गायक बनूं, विद्वान् कवि वक्ता बनूं।
रोमांच से गर एक पल, तेरा सुयश गाया न जो॥

आकाश के तारे समुन्दर के सभी मोती चुनूं।
क्या लाभ है तेरी शरण, श्रद्धा सुमन लाया न जो॥

कर इन्द्र सा शृंगार गर फिरता रहूं तो क्या हुआ।
इस देह पर गर प्राणधन, तेरी पड़े छाया न जो॥

वह हृदय किस काम का जो, विषय जग के छोड़ कर।
दिन-रात तेरे प्रेम में, हे ईश लहराया न जो॥

जग का बना और जगत् को, अपना बनाया भी तो क्या,
मन वचन मेरा प्रभु, तेरा ही बन पाया न जो॥

जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी

जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी,
विश्व-प्रेम प्रतिमा अति प्यारी ।

सत्य-सुधा बरसाने वाला, स्नेह-लता सरसाने वाला,
सौम्य-सुमन विकसाने वालां, विश्व विमोहक भंव भय हारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥१ ॥

इसके नीचे बढ़ें अभय मन, सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन,
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन, आलोकित होवें दिशि सारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥२ ॥

इससे सारे क्लेश शमन हों, दुर्मति, दानव, द्वेष, दमन हों,
अति उज्ज्वल अति पावन मन हों, प्रेम तरंग बहे सुखकारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥३ ॥

इसी ध्वजा के नीचे आकर, ऊंच-नीच का भेद भुलाकर,
मिलें विश्व मुद-मंगल गाकर, पन्थाई पाखण्ड बिसारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥४ ॥

इसी ध्वजा को लेकर कर में, भर दें वेद-ज्ञान घर-घर में,
सुभग शान्ति फैले जग भर में, मिटे अविद्या की अंधियारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥५ ॥

विश्व प्रेम का पाठ पढ़ावें, सत्य अहिंसा को अपनावें,
जग में जीवन ज्योति जगावें, त्याग पूर्ण हो वृत्ति हमारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥६ ॥

आर्य जाति का सुयश अक्षय हो, आर्य-ध्वजा की अविचल जय हो,
आर्य जनों का ध्रुव निश्चय हो, आर्य बनावें वसुधा सारी ॥
जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी........ ॥७ ॥

आर्य समाज के दस नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना, सब आर्यों का परम धर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहिए।

६. संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करना चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

संगठन-सूक्त

ओ३म् सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर॥ १॥

हे प्रभो तुम शक्तिशाली, हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं, कीजिये धन वृष्टि को॥ १॥

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सं जानाना उपासते॥ २॥

प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम, कर्त्तव्य के मानी बनो॥ २॥

समानो मन्त्रः समितिः समानी, समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः, समानेन वो हविषा जुहोमि॥३।

हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हो।
ज्ञान देता हू बराबर, भोग्य पा सब नेक हो॥ ३॥

समानी व आकूतीः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ ४॥

हों सभी के दिल तथा, संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़ें सुख सम्पदा॥ ४॥

शान्ति पाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्वं शान्तिः। शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि॥ ओ३म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!